आर्य विद्या परिषद्, दिल्ली

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा
15, हनुमान रोड, नई दिल्ली

ओ३म्

शिष्टाचार एवं नैतिक शिक्षा

सुरेन्द्र कुमार रैली

4

नयी पीढ़ी को सुसंस्कृत करने का उपक्रम

बालक और युवा ही भारत के भावी कर्णधार और निर्माता होंगे। लेकिन आज हमारी इस अमूल्य सम्पत्ति को निर्ममतापूर्वक विनष्ट किया जा रहा है। अपने इस मूलधन का विनाश हम खुली आँखों से देख रहे हैं। अमेरिकी वैश्वीकरण का घातक आक्रमण हमारे बालकों और युवाओं पर ही लगातार हो रहा है।

टी.वी., मोबाइल, कम्प्यूटर, इन्टरनेट ऐसे दुर्दमनीय साधन हैं जिनके द्वारा नई पीढ़ी के निर्माण में अभूतपूर्व योगदान हो सकता था, परन्तु ये साधन तो बन्दर के हाथ में पलीते की तरह पड़ गये हैं और इनके द्वारा नयी पीढ़ी को अपसंस्कृति के जाल में बड़ी सुगमता से फँसाया जा रहा है।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा और उससे संलग्न आर्य विद्या परिषद् ने नयी पीढ़ी को सुसंस्कृत, संयमी, संवेदनशील, उत्तरदायित्वों को सहर्ष स्वीकार करने वाले नागरिक बनाने के लिए एक स्तुत्य उपक्रम हाथ में लिया है। शिष्टाचार और नैतिक शिक्षा का प्रचार और प्रसार ही उनका लक्ष्य है। उन्होंने इस विषय को लक्ष्य कर 12 भागों (कक्षा 1 से 12 तक) में व्यावहारिक और प्रभावशाली साहित्य का निर्माण किया है। इन पुस्तकों में छात्रों के शिष्टाचार और नैतिक विकास को दृष्टि में रखकर सामग्री प्रस्तुत की गयी है। छात्रों में उत्तम संस्कारों और आस्तिकता पर बल दिया गया है। इन पुस्तकों में संध्या और यज्ञ के साथ सदाचार की शिक्षा देने वाली सामग्री दी गयी है।

इन 12 पुस्तकों के लेखक व आर्य विद्या परिषद् के प्रस्तोता, श्री सुरेन्द्र कुमार रैली के धर्म, समाज और देश के प्रति सात्विक चिन्तन का ही मधुरफल है। लेखक ने प्रारंभ में ही बालकों को 12 अनिवार्य और आवश्यक बातें समझाई हैं। बालक के वैयक्तिक जीवन के साथ घर, परिवार, समाज, देश और धर्म का ज्ञान प्रश्नोत्तर शैली में कराया है। नित्यप्रति के व्यावहारिक ज्ञान से बालकों को अवगत कराया है। पुस्तक में ओ३म्, ईश्वर, वेद, वैदिक संध्या, प्रार्थना, गायत्री मन्त्र, वर्ण व्यवस्था, सत्यार्थ प्रकाश, कर्मफल, अग्निहोत्र, माँस भक्षण निषेध, त्रैतवाद, गोकरुणानिधि, मद्यपान निषेध, भारतीय दर्शन आदि विषय चर्चित हैं। दूसरे भाग में महापुरुषों के प्रेरणाप्रद चरित्र पुस्तकों की उपयोगिता को सिद्ध करते हैं। माता–पिता–गुरु की सेवा, अनुशासन, संयम, नमस्ते, स्वच्छता, सत्संगति, आसन प्राणायाम, एकता, श्रम, निष्ठा, शिष्टाचार, मित्रता, उत्तरदायित्व, सन्तोष, कर्तव्य परायणता, ब्रह्मचर्य, साहस, भ्रातृभाव इत्यादि सद्गुणों की शिक्षा, छोटी–छोटी कहानियों के माध्यम से, इस माला में अच्छी तरह चमक रही है। आर्य, आर्यावर्त, आर्य–समाज, गुरुकुल, डी.ए.वी., संस्कृत भाषा, इत्यादि विषयों का समावेश लेखक की सूझबूझ की दाद देता है। इन पुस्तकों का मैं हृदय से स्वागत करता हूँ। पुस्तकों की भाषा प्रांजल, शैली सुबोध और हृदयग्राही है। छपाई, साज–सज्जा नयनाभिराम हैं। मूल्य अतिअल्प है। यह पुस्तकें घर–घर पहुँचने योग्य हैं।

- कै. देवरत्न आर्य

प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

मुद्रक : एस.एन. प्रिंटर्स, 1/11807, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

प्रार्थना मंत्र

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आसुव।।

यजु० ।३० ।३ ।

अर्थ

हे समस्त संसार के उत्पन्न करने वाले शक्तिमान् प्रभो! हमारे समस्त दुर्गुण, दुष्कर्मों व दुर्व्यसनों को दूर करो और जो कल्याणकर गुण, कर्म व स्वभाव हो उसकी प्राप्ति कराओ।

17

जय घोष

जो बोले सो अभय-**वैदिक धर्म की जय**

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम चंद्र की-**जय**

योगिराज श्री कृष्ण चंद्र की-**जय**

गुरुवर दंडी विरजानंद महाराज की-**जय**

ऋषिवर स्वामी दयानन्द की-**जय**

धर्म पर मर मिटने वालों की-**जय**

देश पर बलिदान होने वालों की-**जय**

भारत माता की-**जय**

गौ माता का-**पालन हो**

आर्यसमाज-**अमर रहे**

वेद की ज्योति-**जलती रहे**

ओ३म् का झंडा-**ऊँचा रहे**

हमारा संकल्प-**कृण्वंतो विश्वमार्यम्**

वैदिक ध्वनि-**ओ३म्**

सब को वैदिक अभिवादन-**नमस्ते जी।**

★

शिष्टाचार एवं नैतिक शिक्षा

(भाग-4)

सुरेन्द्र कुमार रैली
एम.ए., एलएल.बी
प्रेरक व शिक्षाविद्
प्रस्तोता, आर्य विद्या परिषद्, दिल्ली

पहला संस्करण	–	2005
द्वितीय संस्करण	–	2005
तृतीय संस्करण	–	2006
आठवां संस्करण	–	2011

मूल्य : ₹ 25.00

आर्य विद्या परिषद्, दिल्ली
दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा
15 हनुमान रोड, नई दिल्ली-110001

विषय सूची

1.	भूमिका	3
2.	शिक्षकों से	5
3.	शिक्षक निर्देश : सामान्यं ज्ञान की 20 बातें	6
4.	प्रार्थना : जीवेम शरदः शतं	20
5.	प्राणायाम	21
6.	यज्ञः एक पवित्र कर्म	22
7.	भजन : श्रेष्ठ कर्म	24
8.	नमस्ते-उत्तम अभिवादन	25
9.	स्वामी विरजानंद सरस्वती	28
10.	श्रीरामचन्द्र	34
11.	वैदिक संध्या (पहले 11 मंत्र)	40
12.	महान् गुण : दया	52
13.	महान् गुण : स्वच्छता	56
14.	महान् गुण : एकता	58
15.	वैदिक प्रश्नोत्तरी	61
16.	भजन	63
17.	जयघोष	64

16

सर्वव्यापक

दुनिया की हर वस्तु भगवन तेरी याद दिलाती है।
पत्ता पत्ता डाली डाली तेरे ही गुण गाती है।।
सुंदर है तेरी यह माया पृथ्वी सूरज चाँद बनाया।
पी पी करे पपीहा, कोयल सुंदर राग सुनाती है।।
ऋषियों मुनियों ने है ध्याया, मन मंदिर में तुझको पाया।
जर्रे जर्रे में आप समाया श्रुति यही बतलाती है।।
रंग बिरंगे फूल खिलाए, नदियाँ नाले खूब चलाए।
हाथों बिना पहाड़ बनाए समझ नहीं कुछ आती है।।
दुनिया है सुंदर फुलवारी फूल हैं जिसमें सब नर नारी।
देख के रचना जनता सारी जय जयकार मनाती है।।
नदियों में सब जल ही जल है, बागों में सब फल ही फल है।
जंगल में सब हरियावल है, बदली मेंह बरसाती है।।
आत्मा अपनी शुद्ध बनाएँ, वेद ज्ञान से लाभ उठाएँ।
मन मंदिर से 'नंदलाल' आवाज यही अब आती है।।

☆

वैसा ही फल देता है। अच्छे कर्मों का फल सुख और बुरे कर्मों का फल दुख देता है।

प्रश्न- हमें ईश्वर की भक्ति क्यों करनी चाहिए ?

उत्तर हमें ईश्वर की भक्ति करनी चाहिए क्योंकि हमारा कर्त्तव्य बनता है कि किसी से कुछ प्राप्त करने पर उसका धन्यवाद करें। ईश्वर ने हमें सब कुछ दिया है। उसने हमें यह सुन्दर शरीर दिया है जिसमें आंख, कान, हाथ, पैर आदि ऐसी अनमोल चीजें दीं, जिसे दुनिया का कोई भी व्यक्ति नहीं दे सकता। इसलिए हमें उसका भक्ति के रूप में धन्यवाद करना चाहिए। भक्ति से मन एकाग्र होकर शांत हो जाता है। बुराइयाँ दूर होती हैं आत्मा पापों से मुक्त हो जाती है, और हमारी आत्मशक्ति बढ़ती है।

प्रश्न- उसकी भक्ति कैसे करें ?

उत्तर उसकी भक्ति जल, फूल, प्रसाद आदि चढ़ाकर नहीं अपितु उसका ध्यान करके मन से भक्ति करनी चाहिए। उसे हमेशा याद करते हुए ईमानदारी से अपने कर्त्तव्यों का पालन करना ही सच्ची भक्ति है।

प्रश्न- ईश्वर दिखाई क्यों नहीं देता ?

उत्तर संसार में बहुत से ऐसे पदार्थ हैं, जिनका अस्तित्व होने पर भी वे दिखाई नहीं देते। जैसे बिजली हमें दिखाई नहीं देती परन्तु मशीनों के चलने पर हम उसके अस्तित्व को मानते हैं। इसी प्रकार इस संसार की महान् रचना को देखकर तथा जीवों के अद्भुत शरीरों को देखकर पता चलता है कि इनका रचनाकार कोई अलौकिक है। वह अलौकिक शक्ति ईश्वर ही हो सकती है। इन्हीं सबसे हमें ईश्वर की सत्ता पर विश्वास करना ही पड़ता है। ईश्वर दिखाई भी देता है परन्तु इन बाहरी आँखों से नहीं, हमारे पवित्र अन्तःकरण से उसका अनुभव होता है।

भूमिका

शिक्षा से ही मानव जीवन का विकास होता है और इसके द्वारा मनुष्य के शरीर, हृदय तथा मस्तिष्क का विकास होता है। विद्यालयों में विभिन्न विषयों का पठन–पाठन विद्यार्थियों को अपने जीवन में सही दिशा प्राप्त करने में सहायक होता है, परन्तु उसका आत्मिक विकास, नैतिक शिक्षा के द्वारा ही संभव है, और इसी से विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के लिए मानवीय मूल्यों की शिक्षा मिलती है। आर्यसमाज का सदैव प्रयास रहा है कि इन मानव मूल्यों से विद्यार्थियों को प्रारम्भ में ही अवगत करा दिया जाये। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बद्ध आर्य विद्या परिषद्, दिल्ली ने शिष्टाचार एवं नैतिक शिक्षा की पुस्तकें बच्चों को उपलब्ध कराई हैं जिनके द्वारा उनमें अच्छे संस्कार और ईश्वर में विश्वास पैदा हो, तथा संध्या-यज्ञ आदि के साथ-साथ महापुरुषों के जीवन-चरित्र, उनकी शिक्षाएँ और सदाचार की शिक्षा देने वाली कहानियां भी सम्मिलित की गई हैं।

इन पुस्तकों में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) के वर्ष 2000 के पाठ्यक्रम को भी ध्यान में रखा है जिसमें निर्देश दिया गया है कि बच्चों में सुरुचिपूर्ण संवेदनशीलता, स्वस्थ जीवन शैली, सकारात्मक सामाजिक चेतना, परिश्रम के प्रति आदर व नैतिक मूल्यों में आस्था का समावेश होना चाहिए ताकि वह दूसरों के

विचारों को बड़ी नम्रता से समझते हुआ सद्‌भाव एवं विवेक से अपनी कथनी और करनी में उन्हें लाएं।

हमारा प्रयास है कि हम विद्यार्थियों में सत्य, सद्‌भाव, सहयोग, ईमानदारी और परिश्रम करने जैसे अनेक गुणों का उनके जीवन में समावेश कर सकें।

इन पुस्तकों के लेखन में जिन–जिन महानुभावों से प्रत्यक्ष रूप से अथवा उनके लेखों, कहानियों, गीतों व भजनों आदि के माध्यम से परोक्ष रूप से सहयोग मिला है, मैं उन सबके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ और आशा करता हूँ कि विद्यार्थी, अध्यापकवृंद और अन्य लोग इस पुस्तक को उपयोगी पायेंगे और विद्यार्थियों को सुसंस्कृत बनाकर राष्ट्रनिर्माण की सतत् पुण्यप्रक्रिया में सहयोगी होंगे।

सुरेन्द्र कुमार रैली

15
वैदिक प्रश्नोत्तरी

प्रश्न- संसार को बनाने वाला कौन है ?

उत्तर संसार को बनाने वाला ईश्वर है।

प्रश्न- क्या ईश्वर साकार है ?

उत्तर नहीं, ईश्वर साकार नहीं है। ईश्वर निराकार है। उसकी मूर्ति या आकार नहीं होता ।

प्रश्न- ईश्वर का क्या स्वरूप है ?

उत्तर ईश्वर सर्वव्यापक अर्थात् सब जगह विद्यमान है। सर्वज्ञ अर्थात् सब कुछ जानता है। सर्वशक्तिमान् अर्थात् जिसको अपने कार्य करने के लिए किसी की सहायता की आवश्यकता नहीं है। वह हमेशा रहने वाला है। इस प्रकार ईश्वर का महान् स्वरूप है।

प्रश्न- ईश्वर का प्रमुख नाम क्या है ?

उत्तर ईश्वर के गुणों के आधार पर उसके अनेक नाम हैं, जैसे- न्याय करता है इसलिए न्यायकारी, पालन करता है इसलिए विष्णु, सबका कल्याण करता है इसलिए शंकर आदि अनेक नाम गुणों के आधार पर है, लेकिन उसका प्रमुख नाम ओ३म् है।

प्रश्न- ओ३म् का क्या अर्थ है ?

उत्तर ओ३म् शब्द तीन अक्षरों से बना है। 'अ', 'उ' और 'म्'। अ का अर्थ है सृष्टिकर्ता, 'उ' का अर्थ है पालन करता और 'म्' का अर्थ है संहारकर्ता।

प्रश्न- क्या ईश्वर न्याय करता है ?

उत्तर हां, ईश्वर न्याय करता है। वह हम सबके कर्मों को देखता है। उससे कुछ भी छिपा नहीं है। जैसे हम कर्म करते हैं

काम करना चाहिए और इसे विश्व की बड़ी शक्ति बनाना चाहिए।

हमें चाहिए कि भारत को सबसे अधिक प्यार करें। हम भारत के हर एक बालक को अपना भाई समझें और हर एक बालिका को अपनी बहन समझें। हम भारत की हर वस्तु को अपनी वस्तु समझकर उसकी देखभाल करें।

फूट से हानि

एकता की कमी को फूट कहते हैं। जब हमारा आपसी प्यार और मेल-जोल टूट जाता है तो उसमें फूट पड़ जाती है। तब हमें अकेले-अकेले और कमजोर देखकर हमारे शत्रु हम पर आक्रमण कर देते हैं और हम हार जाते हैं। इसलिए हमें आपस में मिल-जुलकर रहना चाहिए और देश को शक्तिशाली, उन्नत व समृद्ध राष्ट्र बनाना चाहिए।

विद्यार्थियों के लिए एकता के काम

1. हम विद्यालय के लिए निश्चित वेश में पढ़ने जाया करेंगे ताकि सब विद्यार्थी एक जैसे दिखाई दें।
2. हम सब मानीटर के साथ मिलकर कक्षा का सारा काम करेंगे।
3. हम सब विद्यालय को साज सफाई से रखेंगे और इसके भवन और वस्तुओं को कोई हानि नहीं पहुंचाँएगें।
4. हम विद्यालय में और पड़ोस में मिलकर खेला करेंगे।
5. छुट्टियों में हम मिलकर पढ़ा करेंगे और प्रातः मिलकर सैर करने जाया करेंगे।
6. हम आपस में लड़ाई-झगड़ा नहीं करेंगे।

शिक्षकों से

शिष्टाचार एवं नैतिक शिक्षा की इस पुस्तक का उद्देश्य बच्चों में सहजभाव से अच्छे संस्कार पैदा करना है। उनमें सदाचार के प्रति निष्ठा, महापुरुषों के प्रति श्रद्धा, नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता एवं धार्मिक रूचि आदि गुण उत्पन्न करके उन्हें शालीन, शिष्ट, अनुशासनप्रिय और कर्त्तव्यनिष्ठ बनाना है। इसलिए शिक्षक इस विषय को ऐसी मधुर शैली से पढ़ाएं, जिससे बच्चों की इस ओर रूचि बढ़े और वह स्वतः बड़ी आतुरता से इस विषय के घण्टे के आने की प्रतीक्षा किया करें।

शिक्षक को पहले दिन से ही शिष्टाचार एवं नैतिक शिक्षा के विषय का परिचय कराते हुए, विद्यार्थियों को इसकी उपयोगिता से अवगत करवा देना चाहिए कि शिक्षा प्राप्ति के बाद वह चाहे किसी क्षेत्र में भी कार्यरत हों, यह ज्ञान उनको उनके दैनिक जीवन में आयुभर काम आएगा।

शिक्षकों से अनुरोध है कि इस पुस्तक के पाठों को रटाने का प्रयत्न न करें। बच्चों को केवल अच्छी तरह से उदाहरण देकर बात समझा दें। परीक्षा में प्रश्न पूछने की शैली वैसी ही होगी जैसी अन्य विषयों में होती है।

सुरेन्द्र कुमार रैली

3

शिक्षक निर्देश

सामान्य ज्ञान की बीस बातें

सबसे पहले विद्यार्थियों को शिष्टाचार, लोकाचार या अंग्रेजी में जिसे हम ऐटीकेट्स और उर्दू में अदब या तमीज कहते हैं, सिखाना चाहिए। उनको समय-प्रबंधन के नियमों की जानकारी दें और जीवन में इन नियमों को पालन करने का अभ्यस्त बनाएँ, क्योंकि यह एक सफल जीवन के आधारभूत गुण होते हैं। शिक्षक अपने विवेक के अनुसार बच्चों के स्तर और योग्यता को ध्यान में रखकर उन्हें पढ़ाएँ और सिखाएँ।

(1) **प्रकृति से साक्षात्कार :** विद्यालय में सबसे छोटे बच्चों को उनके चारों ओर जो कुछ भी दिखाई देता है, उससे उन्हें अवगत कराएँ। जैसे— आकाश, सूरज, चाँद, तारे, बादल, वर्षा, पशु (कुत्ता, बिल्ली, बंदर, चूहा, खरगोश, गिलहरी, गाय, भैंस, घोड़ा, हाथी, भालू, बकरी), पक्षी (तोता, चिड़िया, तितली, कौआ, मोर, कोयल, कबूतर), जलचर (मेंढक, मछली, मगरमच्छ), पेड़, पौधे, फूल, खेत, पहाड़, नदी, तालाब, नाव इत्यादि और बताएँ कि यह सब ईश्वर ने बनाए हैं। इसके लिए इससे संबंधित छोटी-छोटी कविताओं, गीतों और कहानियों को भी माध्यम बनाया जा सकता है।

बूढ़े पिता ने उन्हें समझाने का उपाय सोचा। एक दिन उसने अपने पुत्रों को बुलाकर कहा –"तुम बीस लकड़ियों का एक गट्ठर बाँधकर ले आओ।" लड़के गट्ठर ले आये। पिता ने कहा –" इस बँधे गट्ठर को तोड़ो।" सबने जोर लगाया पर गट्ठर न टूटा। अब पिता ने कहा – "गट्ठर को खोलकर एक–एक लकड़ी को तोड़ो। सबने बड़ी सरलता से उन्हें तोड़ दिया।

अब पिता ने पुत्रों को समझाया – "जब तक ये लकड़ियाँ इकट्ठी बँधी हुई थीं तब तक तुममें से कोई भी इन्हें नहीं तोड़ सका। किन्तु जब ये लकड़ियाँ अलग–अलग हो गईं तो तुमने टुकड़े–टुकड़े कर दिए। इस प्रकार यदि तुम गट्ठर की तरह मिलकर रहोगे तो तुम्हें कोई हानि न पहुँचा सकेगा; किन्तु यदि तुम एक–एक लकड़ी की तरह अलग अलग होकर लड़ोगे तो हर कोई तुम्हें मार लेगा। इसलिए आपस में मिलकर रहा करो।" तब से वे लड़के एकता से रहने लगे।

एकता के लाभ

इस प्रकार एकता में बड़ा बल है। हम लोग एकता से रहें तो हम भी बलवान बन सकते हैं। फिर हम भी मिलकर बड़े-बड़े काम पूरे कर सकते हैं।

इस समय हमारे देश में 100 करोड़ से भी अधिक लोग रहते हैं। यदि सब मिलकर रहें तो यह हमारे देश की एकता है। इस एकता के नाते हम सब भारतवासी भाई-भाई हैं। इसलिए हम सब एक हैं। हम सबको मिलकर देश का

14

महान् गुण : एकता

एकता का अर्थ है, एक साथ मिलकर काम करना। एक आदमी अकेला होता है। उसमें बल भी कम होता है। बहुत आदमियों में बल अधिक होता है। एक मनुष्य एक ही जगह पर काम कर सकता है। अनेक मनुष्य एक ही समय पर अनेक स्थानों पर काम कर सकते हैं। छोटे-छोटे अनेक व्यक्ति मिलकर बहुत बड़ा काम कर सकते हैं। पतले से एक धागे को नन्हा-सा बच्चा तोड़ देता है, किन्तु छोटे-छोटे अनेक धागे मिलकर मोटी रस्सी बन जाती है। फिर उसे हाथी भी नहीं तोड़ सकता। इसी तरह पानी की एक बूँद छोटी सी होती हैं अनेक बूँदें मिलकर तालाब बन जाता है। बड़े समुद्र भी इसी तरह बनते हैं। इसी प्रकार मिट्टी के छोटे-छोटे कण मिलकर लम्बा-चौड़ा पहाड़ बन जाता है। एक-एक अँगुली मिलकर एक मजबूत मुट्ठी या मुक्का बन जाता है।

एकता की कहानी

एक बूढ़ा था। उसके तीन पुत्र थे। उनमें एकता न थी और वे आपस में लड़ते थे।

(2) **खाने-पीने की वस्तुओं का ज्ञान :** एक बार प्रकृति स साक्षात्कार हो जाने के बाद इन्हीं बच्चों को शिक्षक उन वस्तुओं का ज्ञान करवाए, जो ये बच्चे रोज खाते-पीते हैं। जैसे– रोटी, डबल रोटी, सब्जी, दाल, सलाद, फल, दूध, पानी, शरबत और उन्हें बताएँ कि यह सब उनको ईश्वर देता है। छोटे-छोटे गीतों के माध्यम से, चित्रों और खिलौनों के प्रयोग द्वारा रोचकता लाते हुए शिक्षक बच्चों को इन वस्तुओं का परिचय दे सकते हैं।

(3) **कपड़ा, मकान और विद्यालय का ज्ञान :** छोटे बच्चे जब खाने-पीने की वस्तुओं से अच्छी तरह परिचित हो जाएँ तो ऋतुओं के अनुसार जो कपड़े वह पहनते हैं, उनकी पूरी जानकारी शिक्षक को उन्हें देनी चाहिए, ताकि उन्हें सर्दी, गर्मी, वर्षा, बसंत, पतझड़, बहार से भी अवगत कराया जा सके। जिस मकान में बच्चे रहते हैं; उसके घर के कमरों, पाकशाला, स्नानागार, शौचालय, आँगन एवं छत की विस्तार से जानकारी देते हुए उन्हें उनके परिवार के सदस्यों का भी परिचय अंच्छी प्रकार कराएँ। बच्चे जिस विद्यालय में पढ़ते हैं, उसका ज्ञान बच्चों को देना अत्यंत आवश्यक है। विद्यालय, प्रधानाचार्य एवं शिक्षक का नाम, उनकी कक्षा, पुस्तकालय तथा विद्यालयसंबंधी पूरी जानकारी देते हुए बच्चों के हृदयपटल पर निश्चयपूर्वक यह अंकित कर दें कि कपड़े, मकान, विद्यालय और पुस्तकें आदि सब ईश्वर देता है।

(4) **दिनचर्या की चर्चा :** शिक्षक विद्यार्थियों को उनकी दिनचर्या के बारे में विस्तार से बताएँ और समझाएँ कि उनको कब क्या करना चाहिए और अपने दिन को उन्हें किस तरह समय-प्रबंधन के सिद्धांतों के अनुसार व्यतीत करना चाहिए।

प्रातः सूर्योदय स पूव उठना, उठत हा अपनी शय्या पर बैठ कर ईश्वर को 'ओ३म्' कहकर स्मरण करना, अपना पहला कदम शय्या से नीचे रखते हुए पुनः ईश्वर को 'ओ३म्' कहकर स्मरण करना, फिर दादा-दादी, नाना-नानी, माता-पिता के चरणस्पर्श करना, अपने भाई-बहनों को व घर में अन्य लोगों को आयु के अनुसार, चरणस्पर्श या 'नमस्ते जी' कहना। उसके उपरांत शौच जाना और शौच के बाद हाथ-मुँह धोना व ताजा पानी पीना इत्यादि।

(5) **शरीर की सफाई :** बच्चों को उनके शरीर का ज्ञान देना और शरीर को साफ-सुथरा रखने की आवश्यकता पर जोर देना। उन्हें मुँह और दाँतों की सफाई के बारे में विस्तार से बताना, कुल्ला करना, दाँतों को दातुन, हाथ से मंजन अथवा ब्रश से पेस्ट इत्यादि लगा कर कैसे साफ करना है यह सिखाना चाहिए। उन्हें चॉकलेट से दाँतों को होने वाले नुकसान से भी अवश्य अवगत कराना चाहिए, क्योंकि इस आयु में माता-पिता के लाड़-प्यार से बच्चे चॉकलेट खूब खाते हैं, जो उनके दाँतों को बहुत नुकसान पहुँचाता है। शिक्षक को चाहिए कि वह बच्चों को नीम की दातुन, हाथों की अँगूली से मंजन करने और अँगूली से मसूड़ों की मालिश करने के लाभ व पेस्ट व ब्रश के गलत प्रयोग से होने वाली हानि से भी अवगत करवाएँ और दाँतों पर कम से कम पेस्ट का प्रयोग करने की सलाह दें।

(6) **सुबह की सैर व कसरत करना :** शिक्षक को चाहिए कि वह बच्चों को सुबह की सैर, तीव्र गति से चलने और दौड़ने के बारे में विस्तार से बताएँ कि यह सब उनके शरीर को कैसे

2. हम प्रतिदिन स्नान करके उजले वस्त्र पहनें।
3. हम गन्दी जगह या गन्दे बच्चों के साथ न खेलें-कूदें।
4. हम छिलके, कागज, जूठन आदि इधर–उधर फेंककर गंदगी न फैलाएँ।
5. हम खोमचे वालों से ऊटपटाँग की चीजें न खायें। ऐसे फल और मिठाइयाँ भी न लें जिन पर मक्खियाँ भिनभिनाती हैं।
6. हम खाने-पीने, उठने-बैठने और रहन-सहन की गन्दी आदतें छोड़ दें। हम हर बात में सफाई का ध्यान रखें।
7. भीतरी सफाई के लिए हमें केवल एक बात का ध्यान रखना चाहिए हम किसी का बुरा न सोचें।

विद्यार्थियों के लिए स्वच्छता के काम

1. हम प्रातः शौच जाने की आदत डालेंगें
2. हम जागते और सोते समय हाथ, मुँह और दाँत साफ किया करेंगे।
3. हम प्रातः स्नान करके साफ कपड़े पहनेंगे।
4. हम अपनी पुस्तकें, कॉपियाँ और बस्ता साफ रखेंगे। उन पर स्याही के धब्बे न लगने देंगे।
5. हम रद्दी कागज और छिलके आदि कूड़ेदान में डालेंगे।
6. हम फर्श पर, बस में और सड़क पर नहीं थूकेंगे।

13

महान् गुण : स्वच्छता

स्वच्छता का अर्थ है सफाई। हमारे शरीर और मन दोनों साफ होने चाहिए, क्योंकि विद्वानों का मत है कि ईश्वर के बाद स्वच्छता का स्थान है। जिसका तन और मन साफ है, वह ईश्वर के पास है।

स्वच्छता के लाभ

स्वच्छ रहने के अनेक लाभ हैं इससे शरीर का मैल दूर होता है। मैल दूर होने से मनुष्य का स्वास्थ्य अच्छा रहता है। स्वस्थ रहने से मनुष्य सुन्दर और आकर्षक बनता है। इससे उसकी उदासी दूर होती है और वह प्रसन्न रहता है। सुन्दर और प्रसन्न मनुष्य सबको अच्छा लगता है। उसको सब कामों में सफलता मिलती है।

स्वच्छता न रखने से तन और मन में मैल भरा रहता है। शरीर मैला रहने से मनुष्य का स्वास्थ्य बिगड़ता है। और उसे अनेक रोग आ घेरते हैं। रोगी मनुष्य सदा दुख पाता है। मन मैला रहने से उसमें पाप और उदासी भर जाती है। पापी मनुष्य सदा बुरी बात सोचता है और दूसरों को देखकर जलता रहता है।

अतः हमें चाहिए कि हम बाहर और भीतर की पूरी सफाई रखें। बाहरी सफाई के लिए हमें नीचे लिखी बातों का ध्यान रखना चाहिए।

1. हम अपने दाँत, नाक, कान को साफ रखें।

स्वस्थ व प्रसन्न रखते हैं ! कसरत में दंड-बैठक, विभिन्न योग के आसन, व्यायाम इत्यादि की पूरी जानकारी देते हुए बच्चों का मार्गदर्शन करना चाहिए। उन्हें लोहे के डंबल, भार उठाने के व्यायाम और आधुनिक जिम के बारे में भी बताएँ और उनसे होने वाले लाभ और हानि की चर्चा भी अवश्य करें। शरीर की तेल से मालिश या हाथों से सूखी मालिश के लाभ भी उन्हें बताएँ।

(7) **नहाना** : शरीर की सफाई के क्रम में विद्यार्थी को प्रतिदिन नहाने का निर्देश देना और उससे होने वाले लाभ से अवगत करवाना। नहाने का सही तरीका क्या है, क़ौन से साबुन से नहाना और कितना साबुन लगाना, बालों को कैसे और किस से धोना, शैंपू इत्यादि और अप्राकृतिक सौंदर्य प्रसाधनों से होने वाले नुकसान और प्राकृतिक सौंदर्य प्रसाधनों से लाभ बतलाना। स्नानागार में नल या फव्वारे के नीचे या बाल्टी से नहाने में पानी को बरबाद न करके कम से कम पानी के प्रयोग का निर्देश देना, ताकि पानी सब के लिए प्राप्त हो सके और शरीर को अधिक से अधिक मल-मलकर नहाने से लाभ भी बताना कि इससे पूरे शरीर की मालिश हो जाती है, जो अच्छी त्वचा और अच्छे स्वास्थ्य के लिए बहुत जरूरी है। शहरों में नहाने के लिए स्नानागार हैं तो गाँवों में कुआँ और तालाब होता है, जिसके पानी से नहाया जाता है। नहाने के बाद तौलिए का प्रयोग भी सिखाना चाहिए कि किस तरह शरीर को अच्छी तरह से रगड़कर पोंछना चाहिए।

(8) **कपड़े पहनना** : बच्चों को कपड़ों के चयन के बारे में भी विस्तार से बताना चाहिए। गर्मियों में वे कैसे वस्त्र पहनें, सर्दियों में किन वस्त्रों का प्रयोग करना चाहिए और वर्षा-ऋतु के लिए

कौन से वस्त्र पहनने उचित रहते हैं ? उन्हें खादी, सूती, रेशमी और सिंथेटिक कपड़ों की जानकारी व विभिन्न प्रकार के कपड़ों के प्रयोग से होने वाले लाभ तथा हानि की पूरी जानकारी दें।

(9) **ईश्वरस्तुति, प्रार्थना व संध्या :** स्नान के उपरांत ईश्वरस्तुति, प्रार्थना या संध्या करनी चाहिए। बच्चों के स्तर और योग्यता के अनुसार उन्हें छोटे-छोटे गीतों, भजनों के माध्यम से शुरू करवा कर, गायत्री मंत्र के बाद पाँचवीं कक्षा तक आते-आते पूरी संध्या अर्थसहित स्मरण करवा देनी चाहिए।

(10) **यज्ञ करना :** संध्या के बाद यज्ञ करना चाहिए। यज्ञ क्यों और कैसे करना चाहिए ? कक्षा छह से कक्षा दस तक पहुँचते-पहुँचते प्रत्येक विद्यार्थी को दैनिक यज्ञ करना आ जाना चाहिए।

(11) **खाना :** अच्छी तरह से समझाकर विद्यार्थियों के मन में यह धारणा बैठा देनी चाहिए कि संध्या व यज्ञ के उपरांत ही उन्हें खाना खाना चाहिए। सुबह के नाश्ते में दूध, फल, अंकुरित एवं उबले हुए चने, मूंग साबुत और मौठ या अन्य पौष्टिक आहार लेना चाहिए। डबल रोटी या पराँठा इत्यादि भी कभी-कभी खा सकते हैं। दोपहर और रात के भोजन में रोटी, सब्जियों, दालों, और सलाद इत्यादि खाने की प्रेरणा देते हुए उनसे शाकाहारी भोजन के लाभ और माँसाहारी भोजन से होने वाली हानियों की विस्तार से चर्चा करनी चाहिए। बच्चों को फास्ट फूड और मैदे से बनी नूडल्स इत्यादि से परहेज करने से भी अवगत कराएँ। उन्हें अच्छी तरह से यह बता देना चाहिए कि क्योंकि – मैदा, मेदे (पेट) को खराब करता है, अतः ऐसी चीजों को कभी-कभी तो ले सकते

और कहा "राजा शिवि! मैं आपकी दया से बहुत प्रसन्न हूँ। आपको वर देता हूँ कि आपका नाम संसार में अमर रहेगा।"

दया के कारण आज भी राजा शिवि की कहानी संसार में प्रसिद्ध है।

छात्रों के लिए दया के काम

1. हम तितलियाँ, कबूतर, चिड़ियाँ, कुत्ते, बिल्ली के बच्चे नहीं पकड़ेंगे। यदि कोई उन्हें सता रहा हो तो हम उससे उन्हें बचाने के लिए यत्न करेंगे।
2. हम यत्न करेंगे कि कीड़-मकोड़े हमारे पैरों तले न कुचले जायें।
3. कई बार आँधी या वर्षा से पक्षियों के बच्चे घोसलों से गिरकर घायल हो जाते हैं। कई बार चिड़ियाँ, कबूतर बिजली के पंखें से टकराकर चोट खा जाते हैं। ऐसी दशा में हम उन्हें उठाकर पानी पिलाएँगे और उन्हें सुरक्षित रखेंगे।
4. हम पैसे बचाकर घायलों और रोगियों की सहायता के लिए रेडक्रॉस में चन्दा देंगे।

जैसे राजा शिवि ने दया करते हुए अपने प्राणों को संकट में डाल दिया।

एक दिन राजा इन्द्र कबूतर का शिकार कर रहे थे। कबूतर उड़ता-उड़ता राजा शिवि की गोद में छिप गया। शिवि उसे दाना-पानी देकर प्यार करने लगे। तभी राजा इन्द्र ने पहुँचकर कहा – "राजा शिवि! यह कबूतर छोड़ दो, क्योंकि यह मेरा शिकार है। मैं इसका मांस खाऊँगा।"

शिवि ने कहा –"आइये राजा इन्द्र जी! बैठिए, भोजन कीजिए। मैं बहुत अच्छी–अच्छी वस्तुएँ बनवा देता हूँ।"

राजा इन्द्र बोले – "नहीं! मुझे कुछ नहीं चाहिए, केवल मेरा कबूतर छोड़ दीजिए।"

शिवि ने कहा – "क्षमा कीजिए, कबूतर मेरी गोद में आकर छिप गया। इस पर दया करना मेरा धर्म है। आप इसे छोड़कर और कुछ भी वस्तु मुझसे माँग लीजिए।"

राजा इन्द्र ने हठ किया – "देर न कीजिए। मुझे भूख लगी है। मेरा शिकार छोड़ दीजिए। मैं उसका मांस खाऊँगा।"

राजा शिवि ने दूसरा रास्ता न देखकर कहा – " यदि आप मांस ही खाना चाहते हैं तो कबूतर के बदले मेरा मांस खा लिजिए।" शिवि की परीक्षा लेने के लिए राजा इन्द्र ने यह बात मान ली। शिवि सचमुच अपना मांस काटकर देने लगे। यह देखकर राजा इन्द्र ने उनका हाथ पकड़ लिया

हैं, लेकिन नियमित भोजन में इनको लेना स्वास्थ्य के लिए बड़ा हानिकारक होता है।

बच्चों को समय पर खाना, बासी खाना न खाने, न ज्यादा गर्म न ज्यादा ठंडा खाना, खूब चबा-चबाकर खाना और खाने के बाद कुल्ला कर के हाथ-मुँह धोने की पूरी प्रक्रिया उन्हें विस्तार से समझानी चाहिए। नीचे बैठकर खाने और मेज-कुर्सी पर बैठकर खाने व पार्टियों में खाने के नियमों और तरीकों पर भी रोशनी डालनी चाहिए, ताकि बच्चे प्रत्येक दृष्टिकोण से खानपान के संबध में उचित व अनुचित का भेद ठीक से समझ सकें।

बच्चों को ठंडे-पेयों–कोकाकोला, पेप्सी, लिम्का, थम्जअप इत्यादि से होने वाली हानियों से भी अवगत करवा देना चाहिए। उन्हें विज्ञान की प्रयोगशाला में ले जा कर इन ठंडे पेयों की पी. एच. वैल्यू निकालकर दिखाएँ और तेजाब व फिनायल की पी.एच. वैल्यू निकालकर तुलना करें, जो लगभग एक ही आएगी इससे उनको यह भली-भाँति समझ में आ जाएगा कि उनके लिए क्या पीना ठीक है और क्या गलत ? ऐसे ठंडे पेय के स्थान पर बच्चों को ताजे फलों और सब्जियों के रस, दूध, लस्सी, छाछ, नींबू-पानी, सत्तू इत्यादि को पीने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए, जो उनके शरीर व स्वास्थ्य के लिए अत्यंत उपयोगी है।

(12) **विद्यालय की उपयोगिता :** विद्यार्थियों को प्रसन्नता से विद्यालय में जाने के लिए उत्साहित करना चाहिए। शिक्षा की उपयोगिता उन्हें समझाते हुए उनमें निरंतर सीखने की ललक पैदा करना शिक्षक का परम कर्त्तव्य है। उदाहरण के लिए बच्चों को उन महापुरुषों की कहानियाँ सुनानी चाहिए जिन्होंने विद्याप्राप्ति

के लिए घोर प्रयत्न, तप व साधना की थी। डी.ए.वी. के संस्थापक महात्मा हंसराज के बचपन व भारत के दूसरे प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री की कहानियाँ इस संदर्भ मे बहुत प्रेरक हैं।

बचपन में महात्मा हंसराज अपने स्कूल से दोपहर को जब अपने घर वापस आते थे तो रास्ते में नदी के तट पर रेत बहुत गर्म होती थी, जबकि उनके पास जूते भी नहीं थे। गर्म रेत पर चलते-चलते जब उनके पैर जलने लगते थे, तो वह अपनी लकड़ी की तख्ती (उन दिनों लिखने के लिए लकड़ी की तख्ती का प्रयोग होता था) पैरों के नीचे रखकर थोड़ा-सा विश्राम करते थे और फिर गर्म रेत पर भागते थे, जब गर्म रेत पर और चलना उनके लिए असह्य हो जाता था तो वह पुनः तख्ती का प्रयोग करते थे। इतनी कठिन परिस्थितियों में उन्होंने शिक्षा-ग्रहण की थी और आज उनके द्वारा संस्थापित डी.ए.वी. विद्यालयों में लगभग दस लाख विद्यार्थी प्रतिवर्ष शिक्षा-ग्रहण कर रहे हैं।

स्वतंत्र भारत के दूसरे प्रधानमंत्री माननीय श्री लाल बहादुर शास्त्री जी बड़े गरीब परिवार से थे। उनका विद्यालय नदी के उस पार था और नाव में बैठकर उस पार विद्यालय में जाने के लिए नाविक को देने के लिए उनके पास किराए के पैसे नहीं होते थे, इसलिए वह अपना बस्ता पीठ पर बाँधकर रोज तैरकर नदी पार करते थे और इस प्रकार वे अपने विद्यालय पहुँचते थे।

इसी प्रकार की अन्य कहानियों से प्रेरित करके विद्यार्थियों का उत्साह बढ़ाना–उनका प्रसन्नता से विद्यालय में आना व उनमें एक नया जोश पैदा करना–शिक्षक का कर्त्तव्य है, ताकि शिक्षा-ग्रहण करके विद्यार्थी अपने विद्यार्थी जीवन में ही समाज और देश

रखे थे। पास ही एक चिड़िया बैठी थी। बालक को वे अण्डे अच्छे लगे। वह अण्डों की ओर बढ़ा तो चिड़िया ने शोर मचाया –चीं–चीं–चीं! बालक ने चिड़िया के रोने की चिन्ता न की। उसने अण्डे उठाकर जेब में रख लिए और चल पड़ा।

घर आकर दीनबन्धु ने वे अण्डे अपनी माताजी को दिखाये। उसने सोचा था, माताजी खुश होंगी। किन्तु वह बोली–"बेटा! तूने यह बुरा किया है। बेचारी चिड़िया इन्हें ढूँढ़ रही होगी और रोती होगी। जा, इन्हें जहाँ से लाया है वहीं जाकर रख दें।" यह सुनकर दीनबन्धु उन अण्डों को वहीं ले गया जहाँ चिड़िया बैठी चिड़-चिड़ करके रो रही थी। उसका रोना सुनकर बालक का हृदय दया से भर आया। उसने वे अण्डे वहीं रख दिए और प्रतिज्ञा कि अब मैं किसी का दिल न दुखाऊँगा। सचमुच उस बालक ने बड़े होकर जीवन-भर लोगों की सेवा की। वह भारत में दीनबन्धु एंड्रयूज के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

दिल में दया होना एक बात है, हाथों से दया के काम करना दूसरी बात है। जिसमें दोनों प्रकार की दया हो उसी की दया पूरी और सच्ची है। जिसके दिल में दया है वह छोटों को मारता-पीटता नहीं। वह दूसरों को हानि नहीं पहुंचाता। वह किसी पर अत्याचार नहीं करता। दुखियों को बचाने के लिए कई बार स्वयं भी दुख सहना पड़ता है।

12

महान् गुण : दया

दया एक बहुत अच्छा गुण है। जब हम किसी को दुखी देखते हैं और हमारे दिल में भी दुख होता है और यदि हम उसकी सहायता करते हैं तो इसी को दया कहते हैं। अपने से छोटों और दुखियों के साथ सदैव दया का व्यवहार करना चाहिए। दुनिया में सबको दया की आवश्यकता होती है। कई बार हम भी गिर पड़ते हैं । हमें चोट लग जाती है। घर से दूर हमें कोई नहीं पहचानता। फिर भी कई लोग दया करके हमें उठाते हैं। झाड़–पोंछकर हमें दवाई भी लगाते हैं, फिर हमें प्यार से हमारे घर पहुँचा देते हैं। इस प्रकार न जाने कब किस पर संकट आ जाए। अतः सबको चाहिए कि वे दया करें।

एक बालक था। वह दीनबन्धु के नाम से प्रसिद्ध था। एक दिन वह कहीं से आ रहा था। मार्ग में उसे एक पेड़ की झुकी हुई शाखा दिखाई दी। वहाँ एक घोंसले में दो अण्डे

के लिए कुछ कर दिखाने की प्रेरणा ग्रहण कर लें।

शिक्षक को विद्यालय जाते हुए व विद्यालय से घर वापस आते हुए सामान्य व्यवहार के निर्देश विद्यार्थी को देने चाहिए, जिसमें सड़क पर देख-भालकर चलना, सड़क पर पड़ी वस्तुओं को ठोकर मारकर न चलना, अपने बाईं ओर चलना, साइकिल, स्कूटर, मोटरसाइकिल या कार को सीमित गति से चलाना । सिर पर हेलमेट का प्रयोग करना, रास्ते पर सीधा चलना, टेढ़े चलने की आदत से बचना, शांति से चलना, दौड़कर सड़क पार न करना, रास्ते में बतियाते या शोर मचाते हुए न चलना, आते-जाते किसी प्रकार की छेड़खानी न करना, घर से सीधा विद्यालय और विद्यालय से सीधा घर वापस जाना इत्यादि बातें विद्यार्थियों को विस्तार से समझा देनी चाहिए।

पाठशाला में जाकर अध्यापकों और साथियों को हाथ जोड़कर 'नमस्ते जी' कहना और 'चरणस्पर्श' करने का तरीका भी बताना चाहिए। आमतौर पर बच्चों को जब उन्हें कोई पुरस्कार मिलता है तो वह पुरस्कार देने वाले के पैरों को छूने के लिए झुकते तो हैं, लेकिन ऐसा आमतौर पर देखा गया है कि वह उसके घुटनों तक ही पहुँच कर रह जाते हैं । अतः शिक्षक को हाथ जोड़कर 'नमस्ते जी' कहने का और 'चरणस्पर्श' करने का तरीका व महत्त्व बच्चों को अच्छी तरह से समझाना चाहिए।

(13) **विद्यालय में पढ़ना :** विद्यार्थियों को कक्षा में चुपचाप अनुशासन में बैठने का अभ्यास भी शिक्षक को करवाना चाहिए। केवल बार-बार चिल्लाकर यह कहना कि 'चुप हो जाओ' अच्छे शिक्षक की पहचान नहीं है। शिक्षक विद्यार्थियों को निर्देश दें कि

वह विद्यालय में कभी भी उँचे स्वर में या चिल्लाकर न बोलें। हमेशा संयम में रहते हुए शांत स्वर में बातचीत किया करें। विद्यार्थी नीचे टाट पर, डेस्क पर या मेज-कुर्सी पर कैसे बैठे ? उसे सीधा बैठने का सही तरीका बताना चाहिए। उन्हें रीढ़ की हड्डी व गरदन सीधी रखकर बैठना व जितना उचित हो उतना गरदन झुका कर लिखना भी शिक्षक को सिखाना चाहिए। विद्यार्थी को लिखने-पढ़ने की जैसी आदत इस आयु में पड़ जाती है, वह जीवन पर्यंत वैसे ही करता रहता है । अतः शिक्षक को अपने विवेक द्वारा उन्हें निर्देशित करना चाहिए।

जब शिक्षक पढ़ा रहा हो तो सभी विद्यार्थी मन लगाकर पढ़ें ऐसा शिक्षक को सुनिश्चित करना चाहिए। उसके लिए शिक्षक को उन्हें सुनने की कला से भी अवगत करवाना चाहिए कि किस प्रकार विद्यार्थी को अपने कान, मन, बुद्धि और आत्मा को पूरी तरह से शिक्षक के पाठ की ओर लगाना है और यदि कुछ समझ में ना आए तो उसको पूछने में उन्हें झिझकना नहीं चाहिए और ना ही आलस्य करना चाहिए।

शिक्षक को बच्चों के श्रुतलेख की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए । आमतौर पर शिक्षक कॉपी में इतना भर लिख देते हैं कि 'श्रुतलेख सुधारो' और इसी से अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। लेकिन उनको सही तरीके से वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर का लिखकर अभ्यास करवाना चाहिए और जहाँ कहीं, कभी भी विद्यार्थी द्वारा ठीक नहीं लिखा जाता तो उस विशेष अक्षर को बार-बार उससे लिखवाकर उसका लेखन ठीक करवाना चाहिए ।

विद्यार्थी को एकांत में पढ़ने और स्मरण करने कि विधि

ब्रह्मांड का रक्षक परमात्मा हमारा रक्षक हो। वह परमात्मा आनंद -रूप साधनों से समस्त संसार की रक्षा करता है। उन इन समस्त जीवों के स्वामी-जड़ता से रक्षा करने वाले आनंद-रूप साधनों की हम बारंबार स्तुति करते हैं। जो कोई हम लोगों से द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उसको उन आनंदों के वश में रखते हैं, जिससे वह जड़ता का निवारण कर हम सबों का मित्र बने और हम उसके मित्र बनें ।।६।।

इस प्रकार छहों **मनसा परिक्रमा** के मंत्रों के अर्थ का ध्यान करते हुए जप करके सर्वशक्तिमान्, सर्वगुरु, न्यायकारी, दयालु, पिता के समान पालन करने वाले, सब दिशाओं में और सब जगह रक्षा करने वाले परमेश्वर का ध्यान करें।

हम बारंबार स्तुति करते हैं। जो कोई हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उसको उन दंडों के वश में रखते हैं जिससे वे पापों का निवारण कर, हमारे मित्र बनें और हम भी उनके मित्र बनें ।।५।।

ओं ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्योअस्तु।
यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।५।।

अथर्व ३।२७।५।।

अर्थः- नीची दिशा का स्वामी सर्वव्यापक सत्कर्म की प्रतिपादिका वेदवाणी को देने वाला परमात्मा हमारा रक्षक हो। वह पिता ज्ञान-रूप साधनों से समस्त संसार की रक्षा करता है। उन इन समस्त चेतन प्राणियों के स्वामी अज्ञानांधकार से रक्षा करने वाले ज्ञान-रूप साधनों की हम बारंबार स्तुति करते हैं। जो कोई हम लोगों से द्वेष करता है और जिससे हम लोग द्वेष करते हैं उसको इन ज्ञानों के वश में रखते हैं, जिससे वह उस अमर ज्ञान को पाकर हमारा मित्र बन सके और हम उसके मित्र बनें।

ओ३म् ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।। ६।।

अथर्व० ३।२७।६।

अर्थः- ऊपर की दिशा का स्वामी महती वेद वाणी व बृहत्

बतानी अत्यंत आवश्यक है। वैसे तो विषय को अच्छी तरह समझकर व स्वयं लिखकर स्मरण करना ही इसका सबसे बढ़िया तरीका है। लेकिन पाठ को बार-बार दोहराकर और उसे लिखकर भी स्मरण किया जा सकता है।

(14) **खेलना** : शिक्षक को चाहिए कि वह खेल-कूद के विविध विषयों का ज्ञान विद्यार्थियों को कराएँ, खेलों की पहचान करवानी चाहिए जिसमें फुटबॉल, क्रिकेट, हॉकी, लॉन टेनिस, टेबल टेनिस, बैडमिंटन, खो-खो, तैराकी, एथलेटिक्स व कुश्ती इत्यादि शामिल हों । उन्हें विश्व-स्तर पर होने वाले ओलिंपिक, एशियाइ, एफ्रो-एशियाइ, कॉमनवेल्थ आदि खेल-प्रतियोगिताओं की पूरी जानकारी देकर यह भी बताएँ कि भारत ने तैराकी व एथलेटिक्स में आज तक कोई स्वर्ण पदक नहीं जीता। बच्चों को प्रेरणा दें कि वह प्रतिदिन शाम को खेलने अवश्य जाएँ। यदि वह तेज दौड़ने, कूदने का निरंतर अभ्यास करें तो हो सकता है कि एक दिन वह विश्व स्तर की प्रतिस्पर्द्धाओं में भाग लेकर देश का नाम रोशन करें।

विद्यार्थियों को खेलते समय केवल मुँह से ही नहीं, अपितु नाक से भी साँस लेने का अभ्यास करवाना चाहिए । खेलते समय सदैव रुमाल अपने पास रखना चाहिए, ताकि पसीना आने पर, उसे शरीर से साफ किया जा सके।

शिक्षक को खेल-भावना के बारे में विद्यार्थियों को विस्तार से बताना चाहिए। उन्हें जीतने पर ज्यादा खुशी या अहंकार नहीं होना चाहिए और हारने पर दुखी या हतोत्साहित भी नहीं होना चाहिए, बल्कि हारने पर उन्हें और अधिक मेहनत करके अगली

बार जीतने का प्रयास करना चाहिए । खेल-भावना के अंतर्गत खेलते समय कोई बेईमानी नहीं करनी चाहिए और खेल के किसी नियम का उल्लंघन भी नहीं करना चाहिए। यदि किसी कारणवश आपसे या निर्णायकों से कोई भूल हो गई हो और वह बात आपकी जानकारी में आ जाए तो तुरंत अभी भूल को स्वीकार करके भूल-सुधारकर लेना चाहिए । खेल में कोई भी जीते या हारे लेकिन खेल-भावना की सदैव विजय होनी चाहिए। इस प्रकार की शिक्षा विद्यार्थियों के मन में अच्छी तरह बैठा दें।

(15) **घर वापिस जाना** : शिक्षक को चाहिए कि वह विद्यार्थियों को अपने घर में जो व्यवहार उन्हें करना है, उसके बारे में भी बताएँ। जब विद्यार्थी विद्यालय से घर वापस जाएँ तो माता-पिता सहित घर में सभी का अभिवादन करें। घर के विभिन्न कार्यों में यथाशक्ति सहयोग करें। यदि माता-पिता या घर का कोई भी सदस्य कोई काम कहता है तो उसे सहर्ष करने को उद्धत रहें। ना-नुकर या बहानेबाजी कभी न करें। घर में कोई बीमार हो जाए तो उसका विशेष ध्यान रखें और जितना संभव हो सके तन-मन से उसकी सेवा करें। घर में माता-पिता की सेवा करना और उनकी आज्ञानुसार कार्य करना ही उनकी भक्ति है।

(16) **मनोरंजन** : आज कल घर में मनोरंजन का अर्थ रेडियो, टेप रिकॉर्डर सुनना या टी. वी. देखना मात्र ही रह गया है। शिक्षकों को चाहिए कि वह टी.वी. कार्यक्रमों को देखने में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करें। विद्यार्थियों को कितना और क्या देखना चाहिए और क्या नहीं देखना चाहिए, उसकी पूरी जानकारी उनको समय-समय पर देते रहना चाहिए। शिक्षक उन्हें प्रेरित करें

निवारण कर, ज्ञानवान् होकर हमारे मित्र बन सकें और हम उनके मित्र बनें।

ओं प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्न मिषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्योअस्तु।
यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।३।।

अथर्व ३। २७। ३।।

अर्थः- पश्चिम दिशा का स्वामी सर्वोत्तम सबसे स्वीकरणीय सर्वज्ञ परमात्मा हमारा रक्षक हो। वह परमात्मा भोग रूप साधनों से सब संसार की रक्षा करता है। उन इन सुख के स्वामी जीवन के रक्षक समस्त भोगों की बारंबार स्तुति करते हैं। जो कोई हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उसको उन भोगों के वश में रखते हैं, जिससे दुःख का निवारण कर वे हमारे मित्र बनें और हम भी उनके मित्र बनें ।।३।।

ओ३म् उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताऽशनिरिषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्योअस्तु।
यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।४।।

अथर्व ३।२७।४।।

अर्थः- उत्तर दिशा का स्वामी समस्त जगत् को उत्पन्न करने वाला न्यायकारी परमात्मा हमारा रक्षक हो। वह परमात्मा दंड रूप साधनों से समस्त संसार की न्यायपूर्वक रक्षा करता है। उन इन न्याय के स्वामी पापों से रक्षा करने वाले दंड-रूप साधनों की

अर्थः- जिस ओर उपासक का मुख है अथवा जिस ओर सूर्य उदित होता है वह प्राची दिशा है। इस दिशा का स्वामी ज्ञानस्वरूप बंधनरहित परमात्मा हमारा रक्षक हो। वह परमात्मा किरणों व प्राणरूप साधनों से समस्त संसार की रक्षा करता है। उन इन इंद्रियों के अधिपतिरूप शरीर की रक्षा करने वाले प्राणों की बारंबार स्तुति करता हूँ। जो कोई हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं, हम उसको उन प्राणों के वश में रखते हैं। जिससे वह अनर्थ से दूर होकर हमारा मित्र बने और हम उसके मित्र बनें।

ओं दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्योअस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।२।।

अथर्व० ३ । २७ । २ ।।

अर्थः- दक्षिण दिशा का स्वामी परमैश्वर्ययुक्त समस्त चराचर प्राणियों में प्रकाशमान परमात्मा हमारी रक्षा करने वाला हो। वह परमात्मा ज्ञानी सत्य विद्या प्रकाशक विद्वान् रूप साधनों से समस्त संसार की रक्षा करता है। उन इन सत्य विद्याओं के स्वामी सत्ज्ञान से मनुष्यता के रक्षक प्रकाशमय विद्वानों की हम बारंबार स्तुति करते हैं। जो हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उनको उन ज्ञानियों के वश में रखते हैं, जिससे वे अज्ञान का

कि वह अपने खाली समय में अपनी रुचि के अनुसार ड्राइंग, पेंटिंग, क्ले मॉडलिंग, किसी संगीत वाद्य यंत्र को बजाने, भजन व गीत गाने और कविता-कहानी लिखने का निरंतर अभ्यास करते रहें, ताकि मनोरंजन के साथ-साथ कुछ सृजनशील और रचनात्मक कार्य भी वे कर सकें; क्योंकि यह उनके व्यक्तित्व में चार चाँद लगा देगा।

(17) **समाज-सेवा :** शिक्षक विद्यार्थियों को समाज के प्रति उनके कर्त्तव्य का बोध भी कराएँ। उन्हें सचेत करें कि वह अपने घर के आस-पास गंदगी न फैलने दें। यदि सफाई नहीं रहती तो संबंधित अधिकारियों को पत्र लिखें और जितनी भी जन-सुविधाएँ उपलब्ध हों सकें, उन्हें दिलवाने का प्रयत्न करें।

विद्यार्थियों को इसके लिए भी प्रेरित करें कि उनके घर में काम करने वाला या घर के आस-पास यदि कोई अनपढ़ है तो उसे वे कम से कम कुछ पढ़ना-लिखना तो सिखा दें । यदि हमारे सभी विद्यार्थी यह कार्य करने लगेंगे तो देश से निश्चय ही निरक्षरता समाप्त हो जाएगी। विद्यार्थियों को चाहिए कि समाज में रहते हुए वह गांधी जी के तीन बंदरों को कभी न भूलें । अपने मुँह से किसी की बुराई न करें, गाली-गलौच या अभद्र भाषा का प्रयोग कभी भी न करें। अपने कानों से किसी की बुराई, चुगली या लड़ाई-झगड़े की बात ना सुनें और न ही अपनी आँखों से बुरा देखें अर्थात् किसी की बुराई पर ध्यान न दें, अपितु उसमें यदि कोई अच्छाई है तो उसको अवश्य ग्रहण करें।

(18) **देश-सेवा :** विद्यार्थियों को देश-सेवा के लिए भी

निरंतर प्रेरित करना शिक्षक का कर्त्तव्य है। यदि कोई विद्यार्थी अपने आस-पास किसी एक अति निर्धन और असहाय व्यक्ति की मदद या सेवा करता है तो यह उसकी देशभक्ति की सबसे बड़ी पहचान है। विद्यार्थी अपने घर के पास किसी भी हस्पताल या स्वास्थ्य केंद्र में जाकर जरूरतमंदों की सेवा कर सकता है। निर्धन रोगियों को खाना या फल आदि बाँट सकता है। वह यह काम अपने जन्मदिन पर या विभिन्न त्योहारों के अवसर पर करके देश-सेवा का पुनीत कार्य कर सकता है।

(19) **पर्यावरण की रक्षा :** शिक्षक विद्यार्थियों को पर्यावरण की रक्षा हेतु प्रेरणा दे। उन्हें प्रेरित करे कि प्रत्येक विद्यार्थी वर्ष में कम से कम एक बार अपने जन्मदिन पर किसी सार्वजनिक जगह पर नीम, पीपल, जामुन, अमलतास इत्यादि का एक पेड़ अपने हाथों से अवश्य लगाए और वर्ष भर उसकी देखभाल करता रहे ताकि सुंदर पर्यावरण का निरंतर निर्माण होता रहे । विद्यार्थी को चाहिए कि वह ध्वनि (शोर) के पर्यावरण का भी ध्यान रखें और अपना स्टीरियो, रेडियो, टी.वी. बहुत कम, जितनी कि सुनने के लिए पर्याप्त हो उतनी आवाज में बजाएँ। स्वास्थ्य और पर्यावरण की रक्षा हेतु सिगरेट-बीड़ी न पिएँ । पान मसाला, तंबाकू का कभी सेवन न करें। उन्हें समझाएँ कि कागज भी पेड़ों से बनता है, अतः जितनी आवश्यकता हो, उतना ही कागज का प्रयोग करें और बिना कारण इसे बरबाद न करें। बिजली, पानी, पेट्रोल इत्यादि का भी उतना ही प्रयोग करें जितनी आवश्यकता हो। किसी भी वस्तु का दुरुपयोग न करने से पर्यावरण सुरक्षित

बनाया। उसी सब को वश में रखने वाले परमात्मा ने समस्त घड़ी, पल आदि क्षणों को तथा दिन और रात के विभाग को पूर्व सृष्टियों के अनुसार ही बनाया। उसी सबके विधाता परमात्मा के सब ओर से प्रदीप्त ज्ञानरूप अनंत सामर्थ्य से समस्त विद्याओं का आधार वेद शास्त्र और त्रिगुणात्मक स्थूल और सूक्ष्म जगत् के कारण रूप प्रकृति यथापूर्व उत्पन्न हुई। उसी सामर्थ्य से प्रलय के बाद होने वाली रात्रि उत्पन्न हुई। उसी सामर्थ्य से पृथ्वी और अंतरिक्षस्थ समुद्र उत्पन्न हुआ। समुद्र की उत्पत्ति के पश्चात् क्षण आदि काल उत्पन्न हुआ।

इस प्रकार पापानुष्ठान के सर्वथा परित्याग का संकल्प करने के पश्चात् **आचमन मंत्र** से आचमन करें।

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।

शंयोरभिस्त्रवन्तु नः ।। यजु० अ० ३६ । मं० १२ ।।

तदनंतर निम्न **'मनसा परिक्रमा'** के मंत्रों से सर्वत्र सर्व शक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु पिता के समान पालन करने वाले रक्षक परमेश्वर का ध्यान करते हुए अपने मन में दृढ़ आस्तिकता और शक्ति को उत्पन्न करें।

ओं प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।१।।

अथर्व० काण्ड ३ सू. २७ मं० १. ।।

को दूर करने वाले हो। हे जगत्पिता, तुम आनंदस्वरूप हो। हे ईश्वर तुम सबसे महान हो। हे दयालु, तुम्हीं सबके उत्पन्न करने वाले हो। हे जनक, तुम्हीं दुष्टों को दंड देने वाले व ज्ञानस्वरूप हो। हे भगवान् तुम्हीं अटल सत्यस्वरूप हो।

इस प्रकार अर्थ-चिंतनपूर्वक प्राणायाम करने के पश्चात् सृष्टि रचना की भावना द्वारा परमेश्वर की स्तुति करते हुए तथा पाप न करने का संकल्प करते हुए निम्न **अघमर्षण मंत्र** पढ़ें।

ओ३म् ऋतं च सत्यंञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत ।
ततो रात्र्य जायत ततः समुद्रो अर्णवः ।१।
ओ३म् समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत।
अहो रात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ।२।
ओ३म् सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।३।

ऋग्वेद मं० १० / सूक्त १९०

हे प्रभो ! आप सब जगत् का धारण और पोषण करने वाले सब को वश में करने वाले हैं । परमेश्वर ने पहली सृष्टियों में जिस प्रकार की रचना की, उसी प्रकार जीवों के पुण्य और पाप के अनुसार वह प्राणी-देह व अन्य सृष्टि को बनाता है। उसी ने सूर्य और चंद्र लोक सर्वोत्तम स्वप्रकाश, अग्नि, पृथ्वी, द्यु और पृथ्वी के बीच में वर्तमान आकाश और उनमें रहने वाले लोकों को

रहता है। ऐसा ज्ञान प्रत्येक शिक्षक को अपने विद्यार्थी को देना चाहिए ।

(20) **रात को सोने से पहले** : शिक्षक विद्यार्थी को यह अच्छी तरह समझा दें कि जल्दी सोना और जल्दी उठना स्वास्थ्य के लिए हितकर है। अतः देर रात तक नहीं जागना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से अगले दिन की दिनचर्या पर बहुत बुरा असर पड़ता है। अतः विद्यार्थी को रात्रि दस बजे तक सो जाना चाहिए।

सोने से पहले माता-पिता की चरण वंदना करना, दिन में अपने द्वारा किए गए सभी कार्यों का आकलन करना और दिन-भर में जहाँ कहीं भी कोई गलती हुई हो, उसका अपने आप निरीक्षण करना और उसको फिर दुबारा ना दोहराने का संकल्प लेकर, ईश्वर को स्मरण करते हुए सो जाना। शिक्षक विद्यार्थी को बताएँ कि कभी भी मुँह ढककर नहीं सोना चाहिए और सोते समय नाक से ही साँस लेना चाहिए ।

उपरिलिखित बीस सामान्य ज्ञान की बातों को विद्यालय के सबसे छोटे बच्चों को यदि छोटी-छोटी कविताओं, गीतों और कहानियों के माध्यम से पढ़ाया जाए तो वह इन्हें प्रसन्नता व तीव्र गति से सीखते हैं। अतः शिक्षक को पढ़ाई में इनका भरपूर प्रयोग करना चाहिए।

4

प्रार्थना

जीवेम शरदः शतं

ओ३म् तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳशृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।।

यजु० 36 /मं० 24

हे सूर्यवत् परमेश्वर ! आप विद्वानों के हितकारी शुद्ध नेत्र तुल्य सबके दिखाने वाले अनादि काल से अच्छी तरह सबके ज्ञाता हैं, उस आपको हम सौ वर्ष तक ज्ञान द्वारा देखें और आपकी कृपा से सौ वर्ष तक हम जीएँ, सौ वर्ष तक सद्शास्त्रों को सुनें। सौ वर्ष पर्यंत पढ़ाएँ और उपदेश करें और सौ वर्ष तक दीनता रहित हों और सौ वर्ष से अधिक भी देखें, जीएँ, सुनें और अदीन रहें।

वीर्यशाली व समाज व राष्ट्र का हितकारी हो।

ओं तपः पुनातु पादयोः । (दोनों पैरों पर।)

हे प्रभो ! आप सत्यधर्म के आचरण करने वाले हो। आपकी इस पवित्र शक्ति को पाकर मेरे दोनों पैर सन्मार्ग में बढ़ते हुए मेरा कल्याण करने वाले हों।

ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि । (सिर पर।)

हे सत्यस्वरूप ! आपकी शक्ति को पाकर मेरे सिर की सभी शक्तियाँ पवित्र एवं सत्यमय होकर मेरा कल्याण करें।

ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र । (समस्त अंगों पर।)

हे भगवान् ! आप व्यापक और सबसे बड़े हो। मैं भी आपकी इसी शक्ति से पवित्र होकर सब जगह हितकारी और ज्ञानी बना रहूँ।

मार्जन के पश्चात् निम्न मंत्र का जप करते हुए सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में लिखित विधि के अनुसार कम से कम तीन प्राणायाम करें। नाभि के नीचे से मूलेंद्रिय के ऊपर संकोच करके हृदय के वायु को बल से बाहर निकाल के यथाशक्ति रोके रहें । पश्चात् धीरे-धीरे वायु अंदर लेके अंदर ही थोड़ा-सा रोकें । इस प्रकार यह एक ही प्राणायाम हुआ।

प्राणायाम मंत्राः

ओं भूः । ओं भुवः । ओं स्वः । ओं महः । ओं जनः ।
ओं तपः । ओं सत्यम् ।। तैत्ति० १० । २७।।

अर्थः- हे प्रभो, तुम सुखस्वरूप हो। हे जगदीश्वर, तुम दुखों

के समान अदृष्ट शक्तियाँ भी मेरा हितसाधन करें।

मार्जन मंत्र

निम्न मंत्र से हथेली में जल लेकर दाएँ हाथ की मध्यमा व अनामिका अंगुलियों से यथाक्रम इंद्रियों का मार्जन करें अर्थात् जल छिड़कें।

ओं भूः पुनातु शिरसि । (इस मंत्र से सिर पर।)

हे प्रभो ! मेरा मस्तिष्क इस प्रकार पवित्र हो कि मैं अपना और पराया कल्याण करूँ।

ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः। (इस मंत्र से दोनों नेत्रों पर।)

हे प्रभो ! आप दुःखों के दूर करने वाले हो। मेरी आँखें भी आपसे पवित्र शक्ति को पाकर पवित्र दृष्टि वाली व हितकारिणी हों।

ओं स्वः पुनातु कण्ठे । (गले पर।)

हे जगदीश्वर ! तुम महान् हो। आपकी इस महत्ता को प्राप्त करके मेरा कंठ भी विशाल व सर्वहितकारी हो।

ओं महः पुनातु हृदये । (हृदय पर।)

हे प्रभो ! मेरा हृदय पवित्र होवे जिससे मैं विशाल हृदय वाला बनूँ।

ओं जनः पुनातु नाभ्याम् । (नाभि पर।)

हे ईश्वर ! आप सबके उत्पादक हो। आपकी इसी उत्कृष्ट शक्ति को प्राप्त होकर मेरा स्नायु बंधन भी उत्कृष्ट संतानें देकर

5
प्राणायाम

प्राणायाम का अर्थ है, प्राणों को फैलाना। प्राण शरीर का राजा है। "जब तक सांस है तब तक जीवन है" इसलिये स्वस्थ जीवन के लिए प्रतिदिन कम से कम 3 और अधिक से अधिक 21 प्राणायाम अवश्य करने चाहिए। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने प्राणायाम की विधि निम्नलिखित बताई हैं।

प्राणायाम कैसे करें

पहले प्राण (सांस) को पूरी ताकत से बाहर निकाल दो। जहां तक हो सके, बाहर ही रोके रहो। जब घबराहट हो तो धीरे–धीरे सांस अंदर को लें और जब पूरा सांस भर जावे तो जितनी देर तक आराम से रोक सकें तो रोकें और फिर पहले की तरह धीरे-धीरे बाहर निकाल कर रोकें।

इस तरह प्राणायाम करने से स्वास्थ्य अच्छा होता है, शरीर में ताकत और फुर्ती आती है। इन्द्रियां वश में हो जाती हैं और दीर्घ आयु प्राप्त होती है। इसलिए कवि ने बड़ा सुन्दर कहा है।

प्राणायाम कर विधि से भाई,
इन्द्रिय दोषों की होवे सफाई।
जैसे वमन अन्न जल सारा,
आवे बाहर यों प्राण की धारा।
बाहर फेंक मूल को खींचो,
शक्ति जितनी बाहर रोको।
जब घबराओ धीरे-धीरे,
तब वायु को भीतर पी रे।
यह विधि ऋषिवर ने बतलाई,
करो रोज इसे भूलो न भाई

6

यज्ञ : एक पवित्र कर्म

यज्ञ बड़ा ही पवित्र कर्म है। इसे सबसे अच्छा कर्म कहा गया है। यज्ञ का अर्थ केवल हवन ही नहीं, अपितु परोपकार व दूसरों की भलाई के सभी कामों को यज्ञ कहा जाता है।

यज्ञ शब्द यज् धातु से बना है। इसके तीन अर्थ हैं। देव पूजा, दान, संगतिकरण। समाज में विद्धानों को देव कहते हैं। उनका उचित आदर सत्कार करने को देव पूजा कहते हैं। माता, पिता, शिक्षक (गुरु), अतिथि इनको भी देव कहते हैं। इनकी हर प्रकार से सेवा करना, इनका सम्मान करना देव पूजा है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामायण में लिखा है, "प्रातःकाल उठि के रघुनाथा, माता-पिता गुरु नावहिं माथा।" श्रीराम रोज सवेरे उठकर अपने माता-पिता और गुरु को सिर झुकाकर नमस्ते किया करते थे।

दान करना यज्ञ का दूसरा अंग है। तुम्हारे पास धन है, तो अपनी शक्ति के अनुसार दूसरों को दान कर दो, विद्या है तो विद्या-दान करो। सबसे बढ़कर विद्या का दान है। जो धन का परोपकार में व्यय नहीं करते, दान नहीं करते, वे कंजूस कहलाते हैं। उनका धन नष्ट हो जाता है। इसलिए ईश्वर ने यदि अधिक धन दिया है, तो देश, जाति व समाज के उत्थान के लिए लगा दो।

ओं श्रोत्रं श्रोत्रम् ।

(दोनों कानों का पहले दायाँ फिर बायाँ भाग।)

हे जगदीश्वर ! आपकी दया से मेरे कानों में श्रवणशक्ति बनी रहे।

ओं नाभिः । (नाभि का।)

हे प्रभु ! मेरे स्नायु केंद्र में सब अंगों को वश में रखने की शक्ति बनी रहे।

ओं हृदयम् । (हृदय का।)

हे दयामय ! आपकी कृपा से मेरे हृदय में शरीर को क्रियाशील रखने की शक्ति बनी रहे।

ओं कण्ठः। (गले का।)

प्रभो ! मेरे कंठ में प्राणशक्ति बलवान् बनी रहे।

ओं शिरः। (शिर का।)

हे देव ! मेरे शिर की सभी शक्तियाँ क्रियाशील बनी रहें।

ओं बाहुभ्यां यशोबलम् ।

(दोनों भुजाओं के मूल स्कंध।)

हे ईश्वर ! मेरी दोनों भुजाएँ मेरी कीर्ति और बल की आधार हों।

ओं करतलकरपृष्ठे ।

(दोनों हथेलियों का।)

हे प्रभो ! हथेली के समान मेरे सन्मुख रहने वाली मेरी शक्तियाँ मेरा कल्याण करने वाली हों और हथेली के पृष्ठ भाग

आचमन करें।

आचमन मंत्र

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।

शंयोरभिस्रवन्तु नः ।। यजु० अ० ३६ । मं० १२ ।।

अर्थः- दिव्यगुणयुक्त, सर्वप्रकाशक, सर्वानंदप्रद, सर्वव्यापक परमात्मा अभीष्ट आनंद की प्राप्ति के लिए, और पूर्णानंद के भोग द्वारा तृप्ति के लिए, हमारे लिए कल्याणकारी हों। और वह परमेश्वर हम पर सुख की वर्षा करे।

तत्पश्चात् निम्न मंत्र से परमात्मा से अंगों में शक्ति की प्रार्थना करते हुए, केवल मध्यमा और अनामिका अंगुलियों से जल स्पर्श करके अपने निम्न अंगों का यथाक्रम स्पर्श करें।

ओं वाक् वाक्।

(इस मंत्र से मुख का दायाँ (Right) फिर बायाँ (Left) भाग।)

हे प्रभो ! आपकी कृपा से मेरी वाणी में वाक्शक्ति बनी रहे।

ओं प्राणः प्राणः।

(इससे नासिका का पहले दायाँ फिर बायाँ।)

हे प्रभो ! आपकी दया से मेरे प्राणों में जीवन-शक्ति बनी रहे।

ओं चक्षुश्चक्षुः।

(दोनों आँखों का पहले दायाँ फिर बायाँ भाग।)

हे भगवान् ! आपकी स्नेह-शक्ति से मेरी दोनों आँखों में दृष्टि-शक्ति बनी रहे।

यज्ञ का तीसरा अंग है, संगतिकरण अर्थात् मेल-मिलाप से रहना। देश में एकता, संगठन, मित्रता का भाव कायम रखना। हमारे देश में एकता की बड़ी जरूरत है। आपस की फूट के कारण हम सैकड़ों वर्षों तक विदेशियों के गुलाम रहे। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में हमें यज्ञ के द्वारा एकता, संगठन और प्रेम का संदेश दिया है।

यज्ञ पांच हैं। (१) ब्रह्मयज्ञ, (२) देवयज्ञ, (३) पितृयज्ञ, (४) अतिथियज्ञ, और (५) बलिवैश्वदेव यज्ञ अर्थात् सन्ध्या, हवन, माता-पिता की सेवा, अतिथि सत्कार, पशु-पक्षी आदि प्राणियों की अन्न आदि से सेवा। हवन को भी यज्ञ कहते हैं, क्योंकि आग में घी-सामग्री आदि सुगन्धित चीजों को डालकर वायु से दुर्गन्ध को दूर कर, और आग के परमाणुओं को ऊपर पहुंचाकर बादलों द्वारा वर्षा की जाती है, जिससे अन्न पैदा होता है और प्रजा का पालन होता है।

ये पांचों महायज्ञ प्रत्येक मनुष्य को रोज नियमपूर्वक करने चाहिए तभी हमारे जीवन का तथा समाज का सुधार होगा।

7
श्रेष्ठ कर्म

यज्ञ जीवन का हमारे श्रेष्ठ सुंदर कर्म है।
यज्ञ का करना कराना, आर्यों का धर्म है।।१।।

यज्ञ से दिशि हो सुगंधित, शांत हो वातावरण।
यज्ञ से सद्ज्ञान होवे यज्ञ से शुद्धाचरण।।२।।

यज्ञ से हो स्वस्थ काया, व्याधियाँ सब नष्ट हों।
यज्ञ से सुख संपदा हो, कष्ट सारे नष्ट हों।।३।।

यज्ञ से दुष्काल मिटते, यज्ञ से जल वृष्टि हो।
यज्ञ से धनधान्य हो, हर भाँति सुखमय सृष्टि हो।।४।।

यज्ञ है प्रिय मोक्षदाता, यज्ञ शक्ति अनूप है।
यज्ञमय यह विश्व है, विश्वेश यज्ञ स्वरूप है।।५।।

यज्ञमय अखिलेश ऐसी आप अनुकंपा करें।
यज्ञ के प्रति आर्य जनता में अमिट श्रद्धा भरें।।६।।

यज्ञ पुण्य प्रताप से सब पाप ताप तिमिर हरें।
यज्ञ नौका से अभय संसार सागर को तरें।।७।।

तो समझना चाहिए कि मन नहीं लग रहा। और मन को बार-बार उसमें लगाने का प्रयत्न करना चाहिए।

विधि

संध्या-रात्रि और दिन की दोनों संधि बेलाओं में करनी चाहिए। इसके प्रारंभ करने के पूर्व भूमिका रूप में तैयारी करने के लिए पहले स्नानादि द्वारा शरीर-शुद्धि तथा राग द्वेष, चिंतादि सब दुर्भावनाओं से मन को मुक्त कर लेना चाहिए। यदि आलस्यादि आएँ तो मार्जन करें। तदनंतर मन को एकाग्र व शरीर में चेतना लाने के लिए कम से कम तीन प्राणायाम कर लें ।

गायत्री मंत्र

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् ।। यजुर्वेद ३६ ।३।

अर्थः- सर्वरक्षक, प्राणस्वरूप, दुःखों को दूर करने वाले, आनंद देने वाले, सच्चिदानंदस्वरूप परमात्मन्, समस्त संसार के उत्पादक, दिव्यगुण संपन्न आपके श्रेष्ठतम निष्पाप और शुद्ध विज्ञानस्वरूप को हम धारण करें। आप हमारी बुद्धियों को सन्मार्ग पर लगाएँ।

गले के कफ आदि दोष साफ़ करने के लिए सर्वप्रथम दायीं हथेली में जल लेकर निम्न मंत्र से (अर्थ विचारपूर्वक) तीन

11

वैदिक संध्या

संध्या के विषय में निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिएः—

1. 'संध्या' शब्द स्वयमेव बताता है कि इसमें ध्यान, मानसिक एकाग्रता तथा मौन मुख्य हैं। अतः बोलकर संध्या करना, या समूह में मिलकर संध्या करना अवैदिक तथा अनुपयोगी है।

2. संध्या सदा एकांत तथा शांत वातावरण में करनी चाहिए, जहाँ मन स्थिर रह सके।

3. संध्या में मन को एकाग्र करने का सबसे उत्तम उपाय उन मंत्रों के अदृश्य अर्थों पर अपने मन को लगाना है। अतः अर्थ की भावना करते हुए मंत्र का जप मन में करना चाहिए और जब कभी ऐसा प्रतीत हो कि मंत्र के जप के साथ अर्थ का बोध नहीं हो रहा

8

'नमस्ते' उत्तम अभिवादन

संस्कृत साहित्य में अभिवादन के लिए 'नमस्ते' का ही प्रयोग पाया जाता है। यह अभिवादन आदि परंपरा से सर्वमान्य रूप में प्रचलित रहा। किंतु पराधीनता के दो हजार सालों में 'नमस्ते' असंख्य अभिवादन शब्दों की दलदल में फँस गया। आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानंद जी ने इसे फिर से प्रतिष्ठापित कर इसे लोकप्रिय बनाया। इससे कुछ लोगों में यह भ्रांति फैल गई कि 'नमस्ते' अभिवादन आर्यसमाजियों का है। जबकि यह अभिवादन प्राचीनतम और मानवमात्र के लिए है।

'नमस्ते' में दो पद हैं – नमः और ते। इसमें नमः या नमस् का अर्थ है 'सम्मान' और ते का अर्थ है 'आपके लिए' या 'आपके प्रति'। अतः नमस्ते का अर्थ हुआ – 'मैं आपका सम्मान करता हूँ।' इस प्रकार 'नमस्ते' सबके लिए सार्वभौम और सार्वकालिक अभिवादन है।

'नमस्ते' के स्थान पर नमस्कार का प्रयोग असंगत है। कारण यह है कि नमस्ते अपने आप में पूर्ण अर्थ को प्रकट करने वाला लघु वाक्य है, जबकि नमस्कार संज्ञा शब्द है और इसका प्रयोग करते समय वक्ता को कर्ता और क्रिया को भी प्रकट करना होगा अर्थात्, "मैं आपको नमस्कार करता हूँ", इतना बोलना पड़ेगा।

मुसलमानों का अभिवादन (आदाब) सलाम है। इस शब्द में अनामय (सलामती) का भाव है जो मनु के अनुसार किसी भी युद्ध

प्रिय क्षत्रिय से मिलते समय पूछा जाना चाहिए।

लोग 'गुड मॉर्निंग' और 'गुड ईवनिंग' बोलते हैं। ये दोनों अभिवादन 'सुखस्ते प्रभातः' और 'सुखस्ते प्रदोषः' के प्रतिरूप हैं। परंतु 'नमस्ते', एक ऐसा अभिवादन है जो स्थान, काल और अवस्था में बदलता नहीं।

'राम–राम' का अभिवादन हमारी ऐतिहासिक विवशता रहा है। बलात् धर्मांतरण कराने वाले मतांध नवदीक्षित यवनों को – जब 'राम' नाम का उच्चारण की अपनी तलवार को चुनौती लगने के कारण अत्याचार सीमा तक पहुँचाने लगा तब अपनी निर्भीक धर्मनिष्ठा को व्यक्त करने के लिए हिंदुओं ने इसकी द्विरुक्ति को अभिवादन और प्रत्यभिवादन का रूप दे डाला।

'जय श्री राम', 'जय दुर्गे', 'सत श्री अकाल', 'जयहिंद' आदि युद्धकालीन जयघोष हैं जो धर्म एवं राष्ट्र के प्रति निष्ठा की अधिकता के कारण अभिवादन का रूप ले चुके हैं।

नमस्ते कह कर अभिवादन करते समय अपना सिर कुछ झुकाया जाता है तथा हाथ जोड़ लिये जाते हैं। पहले ऐसा अपने से बड़ों के अभिवादन में बोला जाता है। तब अभिवाद्य व्यक्ति इस अभिवादन का उत्तर इसी शब्द में अथवा आशीर्वचन में देता है।

आजादी के बाद ब्रिटेन की साम्राज्ञी जब भारत आईं तो भारत में 'नमस्ते' अभिवादन की सर्वमान्यता को ध्यान में रखकर ही उन्होंने इस शब्द को बोलने की महीनों पहले से रिहर्सल शुरू कर दी थी क्योंकि अंग्रेजी में 'त' अक्षर नहीं होता। यह घटना इस तथ्य की द्योतक है कि विदेशी लोग भी 'नमस्ते' को ही भारतीय अभिवादन मानते हैं। इस प्रकार ऐसा अभिवादन शब्द जो अभिवादन के समूचे अर्थ के साथ पूर्ण सम्मान, प्रति सम्मान तथा आशीर्वाद के भाव को भी अपने में समेटे हुए है, वह शब्द 'नमस्ते' ही है।

तथा अपमान से दुखी होकर युद्ध से पहले ही श्रीराम की शरण में आ गया था।

लंका विजय के पश्चात् वनवास की अवधि पूरी हो जाने पर श्रीराम, सीता और लक्ष्मण समेत अयोध्या को लौटे। हनुमान ने उनके आने की सूचना भरत को दी जो नंदी ग्राम में तपस्वियों जैसा जीवन बिता रहा था। अयोध्या में श्रीराम का स्वागत और राज्यभिषेक हुआ। श्रीराम का राज्य आदर्श राज्य माना जाता है।

श्रीराम का चरित्र आदर्श पुत्र, आदर्श पति, आदर्श भाई, आदर्श मित्र तथा आदर्श राजा का चरित्र है। उन्हें इसीलिए मर्यादा पुरुषोत्तम कहा जाता है। जब तक इस धरती पर पर्वत और समुद्र हैं, तब तक उनकी ये कहानी लोगों को संदेश देती रहेगी कि श्रीराम के समान आचरण करना चाहिए, रावण के समान नहीं।

किंतु वह रावण के हाथों मारा गया।

सीता की खोज करते हुए श्रीराम अपने भाई लक्ष्मण सहित ऋष्यमूक पर्वत पर पहुँचे। वहाँ उनकी हनुमान से भेंट हुई और हनुमान के माध्यम से सुग्रीव के साथ मित्रता हो गई। श्रीराम ने बाली को मारकर किष्किंधा का राज्य सुग्रीव को दिया और उस राज्य का उत्तराधिकारी बाली के पुत्र अंगद को बनाया। सुग्रीव के सैनिक सीता की खोज के लिए चारों दिशाओं में गए, किंतु सीता जी का पता केवल हनुमान ही लगा सका। उसने श्रीराम का संदेश सीता जी को तथा उनका संदेश श्रीराम को दिया। वह आते-आते रावण के पुत्र अक्षयकुमार को मार आया और लंका में भी आग लगा आया।

लंका पहुँचने के लिए सुग्रीव के सेनापति नल और नील ने समुद्र पर पुल बनाया। एक बार अंगद को भेज रावण को यह चेतावनी दे दी गई कि या तो वह सीता जी को लौटा दे अथवा परिणाम भुगतने को तैयार रहे। रावण अपनी हठ पर अड़ा रहा, जिसका परिणाम लंकायुद्ध हुआ। एक-एक करके रावण के सेनापति सेना समेत मारे जाने लगे। युद्ध भयानक था। मेघनाद के बाणों से लक्ष्मण का जीवन संकट में पड़ गया था। उनकी मूर्च्छा हनुमान द्वारा लाई गई संजीवनी बूटी से टूटी। कुंभकरण तथा मेघनाद के बाद रावण भी युद्ध में मारा गया। लंका का राज्य श्रीराम ने रावण के भाई विभीषण को दिया, जो रावण की दुर्नीति

अभिवादन गीत

नमस्ते जी! नमस्ते जी!

आदि काल से रीत यही है, करो नमस्ते जी ...
वेदों में ही इसको पाया, ऋषि-मुनियों ने यही बताया।
देश-विदेश कहीं पर जाओ, करो नमस्ते जी ...
रामायण भी यही सिखाती, गीता भी इसके गुण गाती।
महाभारत भी यही बताती, करो नमस्ते जी ...

राम-कृष्ण वेदों के पुजारी, जिनको जाने दुनियां सारी ।
उनकी आज्ञा को अपनाओ, करो नमस्ते जी...
हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, मिलें मित्र या भाई–भाई।
आदर प्रेम की श्रेष्ठ विधि है, करो नमस्ते जी ...

सब नर-नारी करो नमस्ते, बच्चे-बूढ़े हँसते-हँसते,
विश्व प्रेम के पाठ को पढ़ते, करो नमस्ते जी ...
जो चाहते हैं, भव से तरना, राग-द्वेष छल-कपट न करना,
उल्टा रास्ता छोड़ के चलना, सीधे रास्ते जी,
करो नमस्ते जी ...

'प्रेमी' कष्ट मुसीबत सहना, संघर्षों से कभी न डरना,
सुख हो या दुःख, हर हालत में हँसते रहना जी,
करो नमस्ते जी ...

9

स्वामी विरजानंद सरस्वती

स्वामी विरजानंद सरस्वती एक उच्चकोटि के विरक्त सन्यासी थे। इनका जन्म सन् 1791 में पंजाब प्रांत में जालंधर जिले के गंगापुर ग्राम के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। पाँच वर्ष की आयु में शीतल (चेचक) रोग से पीड़ित हो जाने से इनकी आँखें जाती रही। नेत्रहीन होने पर भी इनकी बुद्धि बड़ी तीव्र थी। एक दो बार सुने हुए मंत्रों को वे ज्यों का त्यों दोहरा देते थे। आठ वर्ष की आयु में इनके यज्ञोपवीत तथा वेदारंभ संस्कार कराए गए।

नेत्रहीन बालक का सबसे बड़ा सहारा उसके माता-पिता होते हैं। ईश्वर ने विरजानंद का यह सहारा भी छीन लिया। माता-पिता की मृत्यु से व्यथित उस कोमलचित्त बालक को जो कष्ट उठाना पड़ा होगा, उसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है। एक सहारा बड़ा भाई शेष था, परंतु उसे इन्होंने स्वयं त्याग दिया। भाई-भाभी के तिरस्कार पूर्ण व्यवहार से तंग आकर बारह वर्ष का वह नेत्रहीन बालक अपने घर से निकल पड़ा।

पंचवटी चले गए। वहाँ एक दिन रावण की बहन शूर्पनखा ने इन्हें देखा और इनके साथ विवाह का प्रस्ताव किया। इनके मना करने पर वह लक्ष्मण के साथ विवाह करने का हठ करने लगी। लक्ष्मण ने उसे फटकार दिया। अपने अपमान का बदला लेने के लिए वह सीता को अपना शत्रु मानकर उस पर लपकी। सीता की रक्षा के लिए लक्ष्मण ने तलवार चलाई, जिसमें शूर्पनखा की नाक कट गई। इस पर शूर्पनखा ने अपने दोनों भाइयों खर और दूषण को सेना लेकर उन्हें दंड देने के लिए भेजा, पर श्रीराम ने अपने बाणों द्वारा उन दोनों को उनकी सेना के समेत मार डाला। तब शूर्पनखा अपने बड़े भाई लंका के राजा रावण के पास गई। उसने सीता की सुंदरता का वर्णन करके उसे पत्नी बनाने तथा राम और लक्ष्मण को दंड देने के लिए रावण को उकसाया। रावण कपटपूर्वक मारीच को सोने का हिरन बनाकर पंचवटी पहुँचा। इस सुंदर हिरन को देखकर सीता ने श्रीराम से इसे पकड़ने का आग्रह किया। उसे पकड़ने के लिए श्रीराम उसके पीछे चल पड़े और उस पर बाण चला दिया। मरने से पूर्ण मारीच ने श्रीराम की आवाज में लक्ष्मण को रक्षा के लिए पुकारा। लक्ष्मण को श्रीराम सीता की रक्षा के लिए छोड़कर गए थे। किंतु सीता के आग्रह करने पर लक्ष्मण को जाना पड़ा। पीछे अकेले में रावण सीता को उठाकर लंका की ओर चल पड़ा। जटायु नामक वृद्ध तपस्वी ने सीता को रावण से छुड़ाने का पूर्ण प्रयत्न किया,

पहले वर मे भरत को राजगद्दी और दूसरे वर से श्रीराम को चौदह वर्ष का वनवास। श्रीराम को जब इस घटना का पता चला तो वे पिता के प्रण को पूरा करने के लिए वन जाने को तैयार हो गए। उनकी पत्नी सीता ने भी साथ जाने का आग्रह किया और भाई लक्ष्मण भी भाई के बिना न रह सका। परिणामस्वरूप तीनों वनवास की अवधि पूरी करने के लिए चल पड़े।

इनके वन चले जाने पर पिता दशरथ को इतना शोक हुआ कि उन्होंने प्राण त्याग दिए। ननिहाल से भरत और शत्रुघ्न को बुलाया गया। राजा दशरथ की अंत्येष्टि के बाद वशिष्ठ मुनि ने भरत को राज्य सँभालने के लिए कहा। किंतु भरत तैयार नहीं हुए। वे श्रीराम का वन में ही राज्याभिषेक करके उन्हें लौटाने के लिए दल-बल समेत चल पड़े। श्रीराम उस समय चित्रकूट पर कुटी बनाकर रह रहे थे। लक्ष्मण अपने भाई और भाभी की सेवा में लगे थे। भरत ने और कैकयी ने श्रीराम को अयोध्या वापस लौटाने के लिए बहुत जोर दिया, पर श्रीराम पिता का प्रण पूर्ण किए बिना वापस लौटाने को तैयार न हुए। अंत में भरत श्रीराम के पैरों से स्पर्श की गई खड़ाउँओं को लेकर अयोध्या लौटे। उन्होंने राजसिंहासन पर इन खड़ाउँओं को सुशोभित किया और स्वयं जटाधारी बनकर अयोध्या से बाहर नंदी गाँव में रहते हुए राज्य का संचालन करने लगे।

भरत के लौट जाने के पश्चात् श्रीराम चित्रकूट छोड़कर

उन दिनों यातायात की सुविधा आज जैसी नहीं थी, फिर भी यह साहसी बालक अपने मार्ग पर बढ़ता चला गया। मार्ग में नाना कष्टों को सहता हुआ तीन वर्ष में वह ऋषिकेश जा पहुँचा। उस समय ऋषिकेश आज जैसा रमणीय स्थान न था। यह योगियों का योगसाधना स्थान मात्र था। वहाँ न कोई अन्न क्षेत्र था, न धर्मशाला थी। चारों और झाड़ियाँ थीं, जिनमें पर्ण कुटिया बनाकर तपस्वी महात्मा तप करते थे। खाने-पीने का साधन जंगली बेर आदि थे। यहाँ पहुँचने का कारण था, बालक के मन का संकल्प जो उसे संसार से बैरागी बनाकर योगसाधना में लगने की प्रेरणा दे रहा था।

यहाँ पर चारों ओर इनके तप की धूम मच गई। सभी तपस्वी उनके तप की बहुत प्रशंसा करते थे। उनकी बुद्धि तो पहले ही तीव्र थी, यहाँ गायत्री की साधना ने उसे और भी तीव्र कर दिया। लोग उन्हें प्रज्ञाचक्षु कहने लगे। सहसा एक रात स्वप्न में उन्होंने सुना, 'तुमने यहाँ जो कुछ प्राप्त करना था कर लिया, अब तुम् यहाँ से प्रस्थान करो।' वे ऋषिकेश से चलकर हरिद्वार, कनखल आ गए। यहाँ आकर उन्होंने दंडी स्वामी पूर्णानंद सरस्वती से दीक्षा ली और उनसे पढ़ने लगे। पढ़ने के साथ-साथ विरजानंद जी पढ़ाने का कार्य भी निरंतर करते रहे जिससे भोजनादि का निर्वाह आसानी से चलता रहा। वे भिक्षा माँगने को बुरा

समझते थे। कनखल से चलकर विरजानंद बनारस पहुँचे। वहाँ वे पं. विद्याधर जी के शिष्य बने और नियमित रूप से अध्ययन करने लगे। यहाँ पर वे व्याकरण के साथ–2 वेदांत आदि दर्शनों का अध्ययन भी करने लगे। काशी में वे गया होते हुए कलकत्ता पहुँचे। आगे चलकर गंगातीर पर बने सभी तीर्थों की यात्रा करते हुए, एटा जिले के सोरों नगर पर उन्होंने आसन जमाया। कुशाग्र बुद्धि होने के साथ-साथ उनकी अध्यापन–शैली ऐसी रुचिकर थी कि शीघ्र ही विद्यार्थी वर्ग पर उनकी धाक जम गई। इसके अतिरिक्त विरजानंद अपने छात्रों से बच्चों की तरह प्रेम करते थे। उनका सुख-दुःख अपना समझते थें

यहीं दंडी विरजानंद की भेंट अलवर के राजा से हुई। वे उनकी विद्वत्ता से इतने प्रभावित हुए कि बहुत अनुनय विनय कर, प्रतिदिन उनसे पढ़ने की प्रतिज्ञा कर उन्हें अपने साथ ही लिवा ले गए। राजा नियम पूर्वक विरजानंद जी से पढ़ने लगे। एक दिन राजा राग-रंग में फँसकर पढ़ने की बात ही भूल गए। विरजानंद ने उसी दिन अलवर छोड़ दिया और पुनः सोरों लौट आए। यहीं इनका एक शिष्य रामदास श्रद्धापूर्वक इनकी सेवा करने लगा। कुछ दिन पीछे वे मुरसान और फिर भरतपुर होते हुए मथुरा आ विराजे। स्थायी रूप से यहीं इनकी पाठशाला स्थापित हुई और वे जीवन के अंत तक यहाँ रहकर विद्यादान में लगे रहे। यहीं

प्यार था। सभी माताओं का एक समान आदर करते थे और माता-पिता की आज्ञा का पालन करते थे। थोड़े ही समय में वे वेद-शास्त्रों की शिक्षा के साथ-साथ अस्त्र-शस्त्र विद्या में भी निपुण हो गए।

एक दिन राजदरबार में ऋषि विश्वामित्र पधारे। उन्होंने राजा दशरथ से अपने यज्ञ की रक्षा के लिए राम और लक्ष्मण को साथ ले जाने की अनुमति माँगी। न चाहते हुए भी गुरु वशिष्ठ के समझाने पर उनको विश्वामित्र की बात माननी पड़ी। इन वीरों ने वन में ताड़का, सुबाहु आदि राक्षसों को मारकर ऋषि के यज्ञ को पूर्ण कर दिया। विश्वामित्र उन्हें वहाँ से राजा जनक की राजधानी मिथिला पुरी ले गए। वहाँ सीता स्वयंवर में श्रीराम ने शिव के धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने की शर्त पूरी की। राजा जनक तथा उसके भाई की चारों पुत्रियों का विवाह इन चारों भाइयों से हो गया।

कुछ समय पश्चात् राजा दशरथ ने युवराज श्रीराम को राज्य का उत्तराधिकारी बनाने का निश्चय किया। उसी समय भरत और शत्रुघ्न ननिहाल में केकय देश गए हुए थे। राज्याभिषेक की सारी तैयारियाँ हो गईं। प्रातः काल अभिषेक होना था, पर दासी मंथरा के बहकावे में आकर भरत की माता कैकयी के हठ करने पर सारी स्थिति बदल गई। वह खाना-पीना छोड़कर कोप-भवन में लेट गई। उसने राजा दशरथ से दो वर माँगे, जिनका वे पहले वादा कर चुके थे।

10

महापुरुषों के जीवन चरित्र

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

श्रीराम को आर्यावर्त्त की पुण्यभूमि पर हुए लगभग नौ लाख वर्ष बीत गए, पर आज भी उनके राज्य को सुख एवं शांति का पर्याय समझकर रामराज्य के नाम से याद किया जाता है। उनके राज्य में सभी लोग अपने-अपने वर्णधर्म और अपने-अपने आश्रमधर्म का पालन करते हुए वेद-मार्ग पर चलते थे। इसीलिए न किसी को कोई रोग था, न किसी प्रकार का कोई शोक था। समय पर वर्षा होती थीं कभी अकाल नहीं पड़ता था। अकाल मृत्यु नहीं होती थी। लोग सदाचारी और ईमानदार थे। सभी का आपस में प्रेम था।

यह कहानी त्रेतायुग के अंतिम समय की है। अयोध्या में रघुकुल में उत्पन्न सूर्यवंशी राजा दशरथ राज्य करते थे। उनकी तीन रानियाँ थीं – कौशल्या, सुमित्रा और कैकयी। वृद्धावस्था में पुत्रेष्टि यज्ञ कराने पर उनके चार पुत्र हुए – कौशल्या से राम, सुमित्रा से लक्ष्मण और शत्रुघ्न तथा कैकयी से भरत। राम इनमें बड़े थे। चारों भाइयों में असीम

स्वामी दयानंद जैसे अनोखे वैरागी सुधारक की इनसे भेंट हुई। इस गुरु को पाकर दयानंद के मन की चिरकाल की अभिलाषा भी पूरी हुई।

मथुरा में उस समय कोई पचास-साठ नाना विषयों के विद्वान् रहा करते थे और हजारों छात्र विविध शास्त्रों का अध्ययन कर रहे थे। मथुरा का दरजा काशी से कम नहीं था। शास्त्रार्थ को ही उस समय विद्वता की कसौटी समझा जाता था। दंडी विरजानंद जी के शास्त्रार्थों की भी काफी धूम मची हुई थी। उनकी विद्वत्ता की सब पर धाक थी, इसलिए कुछ लोग उनकी पांडित्य से ईर्ष्या भी करते थे। सेठ रामकृष्ण के मन में अपने गुरु रंगाचारी के गुरु कृष्ण शास्त्री की झूठी प्रतिष्ठा स्थापित करने की लालसा थी। उन्होंने दंडी जी को नीचा दिखाने का पूर्ण प्रयत्न किया। शास्त्रार्थ के नाम पर दो सौ रुपया रखवा लिया और बिना शास्त्रार्थ कराए कृष्ण शास्त्री को विजयी घोषित कर दिया। लोभी पंडित सभी तरह के अनर्थ करने को तैयार रहते थे। इससे विरजानंद जी के मन पर हर समय सच्चे वैदिक धर्म के प्रचार का विचार उठता रहता था। प्रतिदिन पढ़ने के लिए आने वाले छात्रों में से कोई भी इन्हें इस प्रकार का दिखाई न देता था। उन्होंने जयपुर के राजा रामसिंह को एक सार्वभौम सभा करने की सलाह दी। राजा साहब मान भी गए। पर स्वार्थी पंडितों के कारण वह सभा न हो सकी।

विरजानंद जी के हृदय में निरंतर एक ज्वाला-सी दहकती रहती थी। वृद्धावस्था और नेत्रहीनता के कारण वे स्वयं लाचार थे। उसी समय दयानंद जी उनके पास आए। दयानंद को पाकर विरजानंद ने कहा, 'अंधे को आज लाठी मिल गई है।' उन्हें अपने मन की अभिलाषा पूर्ण होती हुई दिखाई दी । तीन वर्षों तक अध्ययन के उपरांत जब स्वामी दयानंद उनसे विदा लेने लगे तो विरजानंद ने गुरुदक्षिणा के रूप में उनसे आर्य धर्म के प्रचार में अपना सर्वस्व अर्पित करने की प्रतिज्ञा करवाई।

दरअसल विरजानंद भारत की स्वाधीनता के लिए प्रयत्नशील थे। स्वाधीनता के प्रथम संग्राम में उनके योगदान के प्रमाण उपलब्ध हुए हैं। दिल्ली के बादशाह बहादुर शाह ने मथुरा के पास जंगल में स्वतंत्रता संग्राम के सेनानायकों की एक बैठक बुलाई थी। उस बैठक की अध्यक्षता के लिए तब इसी नेत्रहीन सन्यासी को पालकी में बैठाकर ले जाया गया था।

स्वामी विरजानंद पुरातन ऋषियों के भक्त थे। वे ऋषि ग्रंथ पढ़ाते समय उनके अपमान के भय से उच्चासन पर नहीं बैठते थे, मूल से पढ़ाकर समझाते थे। स्वर की मधुरता और उच्चारण की स्पष्टता से थोड़ी संस्कृत जानने वाला भी उनकी बात समझ लेता था। विद्यार्थियों के आचार-विचार पर वे बहुत ध्यान देते थे। सभी छात्र एक-सी

योग्यता वाले नहीं होते, इसी से वे सबको अलग-अलग पढ़ाते थे। पढ़ाते समय पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त देश की दशा, धर्महीन स्थिति, उसके कारण और उपाय भी साथ-साथ बताते जाते थे और ऐसा करते समय, विद्यार्थी से यही कहते, 'इस समय जिस अग्नि को धूम्र-रूप से तुम्हारे हृदयों में प्रविष्ट कर रहा हूँ, वह समय पाकर ज्वाला बनकर भारत-भूमि से अधर्म का नाश कर देगी'।

उनका रहन-सहन बहुत सादा था। खाने में कभी केवल अन्न, कभी केवल दूध और कभी फलाहार करते थे। नेत्रहीन होने पर भी वे अपनी दिनचर्या बिना किसी की सहायता के सुगमता पूर्वक पूरी कर लेते थे। वीणा बजाने में भी वे अति निपुण थे।

इस प्रकार निरंतर आर्ष ग्रंथों का प्रचार कर और अपने अधूरे काम का भार अपने सुयोग्य शिष्य ऋषि दयानंद पर छोड़कर वे 90 वर्ष की अवस्था में आश्विन बदी 13, संवत् 1924 को इस धराधाम से दिवंगत हुए।